ॐ

अथ लघुस्तवः प्रथमः

नमस्त्रिपुर सुन्दर्यै ॥

लघुस्तवः प्रथमोऽयमारभ्यते

ॐ ऐन्द्रस्येव शरासनस्य दधती मध्ये ललाटं ...
श्लौक्लीं कान्तिमनुष्ण गोरिव शिरस्यातन्वती सर्वतः ।
एषाऽसौ त्रिपुरा हृदि द्युतिरिवोष्णांशोः सदाहः स्थिता
छिन्द्यान्नः सहसा पदैस्त्रिभिरघं ज्योतिर्मयी वाङ्मयी ॥१॥

पदच्छेदः

ऐंद्रस्य इव शरासनस्य दधती मध्ये ललाटं प्रभां
शौक्लीं कान्तिम् अनुष्णगोः इव शिरसि आतन्वती सर्वतः।
एषा असौ त्रिपुरा हृदि द्युतिः इव उष्णांशोः सदा अहः (हः) स्थिता
छिन्द्यात् नः सहसा पदैः त्रिभिः अघं ज्योतिः मयी वाक् मयी ॥...

ललाटं	= ललाट के	सर्वतः	= सब ओर से
मध्ये	= ~~बीच में~~ मध्य में	आतन्वती	= विस्तारती हुई
		हृदि	= हृदय में
ऐन्द्रस्य	= इन्द्र के	उष्णांशो	= सूर्य के समान
शरासनस्य	= धनुष के (इन्द्रधनुष के)	द्युतिरिव	तेजस्वी
		सदा	= नित्य
इव	= समान	अहःस्थिता	= दिन की अवस्था में
प्रभां	= शोभा को	हः स्थिता हृदय में स्थित	ठहरी हुई (नित्योदित)
दधती	= धारण करती हुई,	एषाऽसौ	= यही वह (जो प्रत्यक्ष है और जिसका वर्णन आरम्भ किया जाता है)
शिरसि	= सिर में		
अनुष्णगोः	= ~~सूर्य के~~ चन्द्रमा के		
इव	= समान	ज्योतिर्मयी	= प्रकाशमय (तथा
शौक्लीं	= निर्मल (श्वेत)	वाङ्मयी	= वाणीमय (विमर्श...
कांतिं	= दीप्ति को	त्रिपुरा	= त्रिपुरा भगवती *

* तीनों में व्यापक । श्लोक २६ ~~अथ प्रथम~~ प्रथम ...

नः = हमारे

अघं = पाप को

त्रिभिः = तीन

पदैः = पदों से

{१ ललाट २ सिर ३ हृदय
{१ ऐं २ क्लीं ३ सौः } से

सहसा = शीघ्र ही (सहसा बीजाद्य...)

छिन्द्यात = नष्ट करे ॥

जो यह प्रत्यक्ष त्रिपुरा भगवती इन्द्र के धनुष के समान अपनी दीप्ति को ललाट (माथे) पर धारण करती है, और सिर मे चन्द्रमा जैसी निर्मल दीप्ति को सब ओर से विस्तार करती है, तथा हृदय में जो प्रतिदिन नित्य सूर्य की दीप्ति जैसी शोभित है अर्थात जिसको शक्ति का कभी भी अपेक्षा नहीं है, यही वह त्रिपुरा (जो सब को प्रति समय प्रत्यक्ष स्वानुभव सिद्ध है अथवा जो सब के शरीरों में नित्य इन तीन स्थानों पर तीन प्रकार के स्वरूपों को धारण करती है) हमको शीघ्र ध्यान करते ही (ऊपर कहे हुए तीन स्थानों) अथवा मंत्रविधि के अनुसार मंत्र बीजों से हमारे पापों अर्थात अज्ञानरूप मल को नष्ट करे।

जैसा कि इसी स्तव के १६वें श्लोक में कहा गया है कि त्रिपुरा का अर्थ सृष्टि, स्थिति और संहार करने वाली, रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण में ठहरे हुए, ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र कहने वाले; अकार, उकार और मकार नामवाले, ह्रस्व, दीर्घ, और प्लुत रूप तीन वर्णों को पूर्ण करने वाली त्रिपुरा कहलाती है अर्थात सारे त्रिपुटी रूप जगत को; विशेष से, ललाट, सिर और हृदय में जो बीज अक्षरों (ऐं, क्लीं, सौः) के उच्चारण स्थान हैं, स्फार देती है ॥

मंत्रोद्धार विधि पूर्वक :— इस स्तव के दसवें श्लोक

"सहसा पदैर्विक्रमः" ~~इसका~~ अर्थात् ह
मंत्रों के साथ मिलावे जैसे:- ह्सैं, ह्सक्लूं
ह्सैं, ह्सक्लुरी। इन तीन बीजों के नाम "स
"कामराज" और "वाड्व" बीज है।

शरीर में सिर और हृदय के मध्य म
ललाट है। जिस में सब नाडियां मिल जाती
तथा इच्छा, ज्ञान, क्रिया शक्ति के संघट का मध्य
ज्ञान शक्ति है, जिस में इच्छा और क्रिया ~~शक्ति~~ की
शक्तियां सब मिल जाती है और विश्व रूप को निर्विकल्प-
भाव से सारे वर्णों (रंगो) से संयुक्त स्थिति रूप में (अवतार)
धारण करती है, जैसे इन्द्र धनुष यद्यपि एक ही वस्तु प्रतीत
होता है फिर भी सारे वर्ण इस में स्पष्ट है।

ज्ञान शक्ति में एक ऐसा पद है जिस से *शिव में भी
Page (1) प्रवेश होता है और भेदमय जगत में भी क्रिया शक्ति ~~की~~ की
प्रधानता से प्रवेश होता है। सिर में तो क्रिया शक्ति
~~की~~ प्रधान~~ ~~ चन्द्रमा की दीप्ति
जैसी सब ओर से अपने स्वरूप को सृष्टि स्वरूप में
विस्तारती है और हृदय में उष्ण किरणों से भेदमय
जगत को जला देती है अर्थात् संहार करती है।
जैसा कि तन्त्रालोक के आह्निक 3 श्लोक 6 की टीका
में कहा है "ऊर्ध्वे स्थिता चन्द्रकला च शान्ता पूर्णा-
मृतानन्द रसेन देवि, अधः संहार कृज्ज्ञेया महानग्निः
कृतान्तकः"॥

इसी प्रकार हृदय अर्थात् इच्छा शक्ति
प्रधान अवस्था में सूर्य की दीप्ति के समान अर्थात्
संहार कारक ~~नित्य~~ नित्य उदय में आए हुए किरणों
से स्थित है। इसलिए श्लोक के क्रम पूर्वक तीन -
शक्तियों - ज्ञान क्रिया और ~~इच्छा~~ इच्छा शक्ति में त्रिपुरा
का जो स्वरूप है। उसका अभ्यास करना उपदेश दिया है।
इस प्रयोजन की दृष्टि से श्लोक में प्रकाशमय और
वाणीमय के विशेषणों से स्पष्ट किया है। इसका
~~अ~~ अर्थ यह है - इच्छा [illegible] तीन शक्तियों त्रिपुरा
का स्वरूप विमर्शमय दिखाया है और मंत्ररूप-
बीजाक्षरों के अर्थ में वाणीमय कहा हुआ है अर्थात् प
रूप हृदय से जो पश्यन्ति मध्यमा और वैखरी
आविश्रान्त ('अ' से 'क्ष' तक) हल वर्णों
[illegible]

...धनुष के समान
...की ललाट (माथा) में धारण करती है, और
... चन्द्रमा जैसी निर्मल दीप्ति को सब ओर से विस्तार
... है, तथा हृदय में जो प्रतिदिन नित्य सूर्य की दीप्ति
... शोभित है अर्थात् जिस को रात्रि का ~~[illegible]~~ ...
...भी भी अपेक्षा नहीं है, यही वह त्रिपुरा (जो सब को
...प्रतिसमय प्रत्यक्ष स्वानुभवसिद्ध है अथवा जो सब के
शरीरों में नित्य इन तीन स्थानों पर तीन प्रकार के
स्वरूपों को धारण करती है) हम को शीघ्र ध्यान
करते हुए ही (ऊपर कहे हुए तीन स्थानों) पदों
से अथवा मंत्रविधि के अनुसार मंत्र बीजों से हमारे
पापों (अज्ञान रूपमल) को नष्ट करे ॥

जैसा कि इसी स्तव के १६वें श्लोक में कहा है—
कि त्रिपुरा का अर्थ सृष्टि, स्थिति और संहार करने—
वाली; रजोगुण, सतोगुण और तमोगुण में ठहरे
हुए, ~~[illegible]~~ ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र कहने वाले;
अकार, उकार और मकार नामवाले, ह्रस्व, दीर्घ
और प्लुत रूप तीन वर्णों को पूर्ण करने वाली
त्रिपुरा कहलाती है, अर्थात् सारे त्रिपुटी रूप
जगत को विशेष से ललाट, सिर और हृदय
में जो बीज अक्षरों (ऐं-क्लीं-सौः) के उच्चारण स्थान
है; स्फार देती है॥

मंत्रोद्धार विधिपूर्वक:— इस स्तव के १०वें श्लोक में "बो-
द्धव्या निपुणं बुधैः स्तुतिरियं" में सूचना है कि
पहिले श्लोक के चार पदों में से एक एक पद का
पहला, दूसरा और तीसरा मंत्र अर्थात् पहिले
पद में पहला मंत्र वर्ण, दूसरे में दूसरा और तीसरे
में तीसरा मंत्रवर्ण स्पष्ट है। इस कारण ऐं-क्लीं-सौः
एक संपूर्ण मंत्र बन जाता है। जिसका उच्चारण क्रम
से तीन स्थानों पर हो सकता है और "विशेषसहितं"
का तात्पर्य यही है। "सवितः" अर्थात् "र" को भी—
बीजाक्षर के साथ मिलाकर दूसरा बीज बनता है।
जैसे — क्लीं; इसी प्रकार "सदा ~~[illegible]~~ हः स्थिता"
अर्थात् "ह" भी मंत्रों के साथ [illegible] जाता है;
जैसे — "हैं-हक्लीं-हसौः" ॥

P. T. O.

जो मात्रा, अर्थात् ज्ञान द्वारा र...
बचानेवाली तुम्हारे प्रथम वाग्बीज (ऐं) में ठह...
त्रपसी लता (ग्यनधीर) की सूक्ष्मता से निकली हुई आरम्भ ता...
के समान है अर्थात् अतिसूक्ष्म प्रसर स्वरूप को धारण
करती है। हम उस तुम्हारी मात्रा को निरन्तर विमर्श
करते है, वही यह कुण्डलिनी शक्ति सदाशिव से पृथ्वी
तक जगत की उत्पत्ति करने की क्रिया के लिए बान्धे हुए
उद्योग वाली है। इस प्रकार इसका ज्ञान पाकर मनुष्य
दुबारा मां के गर्भ में बालकभाव का स्पर्श नहीं करते है।
अर्थात् इसी जन्म में मुक्त होते है।

रहस्य अर्थ में परा भगवती का प्रथम वाग्बीज पश्यन्ती वाक् है, जो ज्ञानशक्ति रूप अपने स्वरूप सदाशिव तत्त्व में स्थित रहकर ही जगत को अंकुरायमान अवस्था में प्रकाशित करता है।

संनित अर्थ में जो कुण्डलिनी शक्ति अर्थात् 'कुण्ड' शिव स्वरूप में जो लीन शक्ति है, वही मात्रा स्वरूप के ज्ञान से (सारे जगत को रक्षा करने वाली) एक प्रकार की लता अथवा शंगाबेल की तरह निकली हुई आरम्भ के साथ समानता करती है, (यह ग्यवधीर की उपमा क्यों?) (यह लता चमकीली और इसका फूटता हुआ सिरा बहुत सूक्ष्म होता है) वह आपके वाग्बीज अर्थात् 'परा' में ठहरती है। (क्योंकि पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी रूप से वही सूक्ष्म तार धारण कर निकलती है। उसी तुम्हारे वाग्बीज का विमर्शन करते है।

जो कुण्डलिनी शक्ति जगत के उत्पत्ति क्रिया में बांधे हुए उद्योग वाली है। ऐसे ज्ञान की प्राप्ति पर पशु प्रमाता फिर मां के गर्भ में जन्म नहीं लेते है अर्थात् मुक्त होते है ॥२॥

या मात्रा त्रपुसीलतातनुलसत्तन्तूत्थिति स्पर्धिनी
वाग्बीजे प्रथमे स्थिता तव सदा तां मन्महे ते वयम् ।
शक्तिः कुण्डलिनीति विश्वजनन व्यापार बद्धोद्यमा
ज्ञात्वेत्थं न पुनः ~~स्पृ~~ स्पृशन्ति जननी गर्भेऽर्भकत्वं नराः ॥ २ ॥

पदच्छेदः

या मात्रा त्रपुसीलता तनु लसत् तन्तु उत्थिति स्पर्धिनी
वाक् बीजे प्रथमे स्थिता तव सदा तां मन्महे ते वयम्।
शक्तिः कुण्डलिनी इति विश्वजनन व्यापार बद्ध उद्यमा
ज्ञात्वा इत्थं न पुनः स्पृशन्ति जननी गर्भे अर्भकत्वं नराः॥ २॥

या	= जो	सदा	= नित्य
त्रपुसीलता	= "रांगे बेल की" ~~रंगाबेल की~~	मन्महे	= विमर्श करते हैं।
तनु	= सूक्ष्म	कुण्डलिनि	= कुण्डलिनि
उल्लसत्	= निकलती हुई	शक्तिइति	= शक्ति ही
तंतु	= तार के	विश्वजनन	= जगत के [illegible] करने के
उत्थिता	= आरम्भ के साथ	व्यापार	= काम में
स्पर्धिनी	= समानता वाली	बद्धोद्यमा	= उद्योग किये हुए है।
मात्रा	= अंश[2]		
तव	= तुम्हारे		
प्रथम	= पहले	इत्थं	= इस प्रकार (के
वाग्बीजे	= वाणी के बीज में (परा वाणी)[3]	~~इत्थं~~	~~[illegible]~~ स्वरूप को)
स्थिता	= स्थित है,	ज्ञात्वा	= जानकर
तां	= उसी वाणी का	नराः	= मनुष्य
ते वयं	= वह हम (उत्कृष्ट भक्त)	जननी	= माता के
		गर्भे	= गर्भ में
		अर्भकत्वं	= बाल[illegible]

P.T.O.

स्पृशन्ति = स्पर्श [illegible] अर्थात् मुक्[illegible]

पुनः = फिर

न स्वप्राप्ति = स्पर्श नहीं करते हैं।

अर्थात मुक्त हो जाते हैं।

कश्मीरी में ग्यवधीर की बेल को हिन्दी मे राँगे बेल कहते हैं।

हैं पहिली मात्रा, बाहिर निकलने को तैयार, सृष्टि रूप।

शिवभाव में लीन, प्रकाशमय और अपनी इच्छा से ही जगत

रूप में ~~परिवृत्त~~ होने वाली शक्ति।

परिवर्तित

दृष्ट्वा संभ्रमकारि वस्तु सहसा ऐऐ इति व्याहृतम्
येनाऽकूतवशादऽपीह वरदे ! बिन्दुं विनाप्यक्षरम् ।
तस्यापि ध्रुवमेव देवि तरसा जाते तवानुग्रहे
वाचः सूक्ति सुधारस द्रवमुचो निर्यान्ति वक्त्राम्बुजात् ॥ ३॥

पदच्छेद:

दृष्ट्वा संभ्रमकारि वस्तु सहसा ऐ ऐ इति व्याहृतम्
येन आकूत वशात् अपि इह वरदे! बिन्दुं विना अपि अक्षरम्।
तस्य अपि ध्रुवम् एव देवि! तरसा जाते तव अनुग्रहे
वाचः सूक्ति सुधारस द्रवमुचः निर्यान्ति वक्त्र अम्बुजात्॥ ३॥

वरदे! = हे (भोग तथा मोक्ष का) वर देने वाली!
येन = जिसने
इह = इस संसार में
संभ्रमकारि = कोई आश्चर्य जनक
वस्तु = पदार्थ
दृष्ट्वा = देखकर
आकूत = भय या हर्ष के
वशात् = अभिप्राय से
अपि = भी
सहसा = शीघ्रता से
ऐ ऐ इति = ऐ ऐ इस प्रकार*
बिन्दु विना = बिन्दु के बिना
अपि = भी
अक्षरम = अक्षर का

व्याहृतं = उच्चारण किया है
तस्य अपि = उसके भी
वक्त्र = मुख
अम्बुजात् = कमल से
देवि! = हे क्रीडन शील[e]
तरसा = शीघ्र ही
तव = तुम्हारे
अनुग्रहे = अनुग्रह के
जाते = उत्पन्न होने पर
सूक्ति = उत्तम वाणी रूपी
सुधारस = अमृतरस के
द्रवमुचो = प्रवाह को देने वाली
वाचः = वाणियां
ध्रुवं एव = निश्चय ही
निर्यान्ति = निकलती हैं।

हे वरदे! किसी आश्चर्यजनक वस्तु को देखकर शीघ्र ही "ऐं" के स्थान पर जिसने बिना बिन्दु के ही "ऐ ऐ" किसी हर्ष या[…] के अभिप्राय से भी अज्ञान में भी उच्चार किया है […]

[…]

* जब कोई मनुष्य किसी आश्चर्य जनक या भयदायक व[…] देखता है तो उस के मुख से अकस्मात ही ऐ ऐ पद नि[…] यही ऐं बीज अक्षर बिन्दु के बिना है।

हे देवी! अवश्य ही यदि तुम्हारा अनुग्रह उदय में आया हो तो उसके मुखकमल से पश्यन्ती आदि वाणियां ज्ञानमय अमृतरस-चित्‌रस हो सेंचने वाली प्रसर करती हैं ॥३॥

यन्नित्ये तव कामराजमपरं मन्त्राक्षरं निष्कलम्
तत्सारस्वतमित्यवैति विरलः कश्चिद्बुधश्चेद्भुवि ।
आख्यानं प्रतिपर्व सत्यतपसो यत्कीर्तयन्तो द्विजाः
प्रारम्भे प्रणवास्पद प्रणयितां नीत्वोच्चरन्ति स्फुटम् ॥४॥

पदच्छेद:

यत् नित्ये! तव कामराजम् अपरं मन्त्र अक्षरं निष्कलम्
तत् सारस्वतम् इति अवैति विरलः कश्चित् बुधः चेत् भुवि।
आख्यानं प्रतिपर्व सत्य तपसः यत् कीर्तयन्तः द्विजाः
प्रारम्भे प्रणव आस्पद प्रणयितां नीत्वा उच्चरन्ति स्फुटम्॥४॥

(हे) नित्ये = हे अविनाशिनी,
यत तव = जो तुम्हारा
अपरं = दूसरा (क्लीं)
निष्कलं = कलना रहित (क, ल, रहित)
कामराज = अभिलाषा पूरा करने वाला (कामराज)
मंत्राक्षरम = मंत्र अक्षर ~~है~~ (ईं) है
तत् = उस
सारस्वतम् = सरस्वती के (मंत्र अक्षर को)
इति = इस प्रकार
कश्चित् = कोई
चेत = अगर
~~विरलः~~ = ~~विरले ही~~
~~बुधः~~ = ~~ज्ञानवान~~
भुवि = संसार में
~~चेत~~ = ~~यदि~~
अवैति = जाने
... (वह) विरला ही ...

यत = ~~उसी को~~ जिस (बीज अक्षर) को
द्विजाः = ब्राह्मण
प्रतिपर्व = हर एक पर्व पर
सत्यतपसो = सत्यतपस नामी ऋषि का
आख्याने = नाम लेकर
कीर्तयन्तः = कीर्तन करते हैं
प्रारम्भे = (और) आरम्भ में
प्रणवास्पद = ओंकार के स्थान के
प्रणयितां = सम्बन्ध भाव को
नीत्वा = ले जाकर (उस बीज अक्षर का)
स्फुटम् = स्फुट प्रकार से
उच्चरन्ति = उच्चारण करते हैं।

यत्सद्यो वचसां प्रवृत्तिकरणे दृष्टप्रभावं बुधैः
तार्तीयीकमहं नमामि मनसा त्वद्बीजमिन्दु प्रभम् ।
अस्त्वौर्वोऽपि सरस्वतीमऽनुगतो जाड्याम्बु विच्छित्तये
गोशब्दो गिरि वर्तते सनियतं योगं विना सिद्धिदः ॥ ५॥

पदच्छेदः

यत् सद्यः वचसां प्रवृत्तिकरणे दृष्टप्रभावं बुधैः
तार्तीयीकम् अहं नमामि मनसा त्वत् बीजम् इन्दु प्रभम् ।
अस्तु और्वः अपि सरस्वतीम् अनुगतः जाड्य अम्बु विच्छित्तये
गो शब्दः गिरि वर्तते स नियतं योगं विना सिद्धिदः ॥ ५॥

यत् = जो (बीज अक्षर)
सद्यः = तत्क्षणात्
वचसाम् = वाणियों को
प्रवृत्तिकरणे = प्रवृत करने में
बुधैः = बुद्धिमानों से
दृष्टप्रभावम् = देखे प्रभाव वाला है
अहं = मैं
त्वत = (उस) तुम्हारे
~~तार्तीयीकम् = तीसरे (सौं) बीज अक्षर~~
इन्दुप्रभम् = चन्द्रमा की दीप्ति वाले
तार्तीयीकम् = तीसरे (सौं) अर्थात् "सौः"
बीजम् = बीज अक्षर को
मनसा = मन से
नमामि = नमस्कार करता हूँ।
सरस्वतीं = सरस्वती के

और्वोऽपि = (क) वाडवाग्नि भी
(ख) औं बीज तुम्हें भी
जाड्याम्बु = अज्ञानरूपी जलों को
विच्छित्तये = सुखाने के लिए
अस्तु = (समर्थ) हो।
स गोशब्दः = वह गो शब्द
गिरि = वाणी के अर्थ में
~~वर्तते~~ वर्तते = प्रवर्तन होता है
नियतं = (और) अवश्य ही
(क) योगं विना = योग के बिना
(ख) यो गं विना = जो (बीज अक्षर) गकार के बिना (अर्थात् औ बीज अक्षर)
सिद्धिदः = सिद्धि को देने वाला है।

एकैकं तव देवि बीजमनघं सव्यञ्जनाऽव्यञ्जनं,
कूटस्थं यदि वा पृथक् क्रमगतं यद्वा स्थितं व्युत्क्रमात् ।
यं यं काममपेक्ष्य येन विधिना केनापि वा चिन्तितं,
जप्तं वा सफलीकरोति सहसा तं तं समस्तं नृणाम् ॥ ६॥

पदच्छेदः -

एक एकं तव देवि! बीजम् अनघं सव्यञ्जन अव्यञ्जनं
कूटस्थं यदि वा पृथक् क्रमगतं यद्वा स्थितं व्युत्क्रमात्।
यं यं कामम् अपेक्ष्य येन विधिना केन अपि वा चिन्तितं
जप्तं वा सफली करोति सहसा तं तं समस्तं ~~अ~~ नृणाम्॥ ६॥

देवि! = हे देवी!
तव = तुम्हारा
एकैकं = प्रत्येक
अनघं = दोषरहित
बीजं = बीज अक्षर
सव्यंजन = व्यंजनसहित
अव्यंजनं = (या) व्यंजन रहित
कूटस्थं = (या) कूटस्थ ① बीज में ठहरा हुआ
यदि वा = या
पृथक्-क्रमगतं = { पृथक क्रम[2] में गया हुआ
यद्वा = या
व्युत्क्रमात = उलटे क्रम से[3]
स्थितं = ठहरा
यं यं = जिस

कामं = अभिलाषा को
~~अ~~ अपेक्ष्य = अपेक्षा करके
येन केनापि = ~~जिस~~ किसी भी[4]
विधिना = विधि से
चिन्तितं = चिन्तन ~~किया~~ ।
~~ज~~ जप्तं वा = या जप किया हुआ
नृणाम् = मनुष्यों की
तं तं = उस उस
समस्तं = सभी (अभिलाषाओं को)
सहसा = तत्क्षणात्
सफली = सफल
करोति = करता है॥

—

वामे पुस्तक धारिणीमऽभयदां साक्षस्रजं दक्षिणे,
भक्तेभ्यो वरदानपेशलकरां कर्पूर कुन्दोज्ज्वलाम्
उज्जृम्भाम्बुजपत्रकान्त नयन स्निग्ध प्रभा लोकिनीं
येत्वामऽम्ब न पीलयन्ति मनसा तेषां कवित्वं कुतः ॥७॥

पदच्छेदः -

वामे पुस्तकधारिणीम् अभयदां साक्षस्रजं दक्षिणे
भक्तेभ्यो वरदानपेशलकरां कर्पूर कुन्द उज्ज्वलाम्।
उज्जृम्भ अम्बुजपत्र कान्त नयन स्निग्ध प्रभा लोकिनीम्
ये त्वाम् अम्ब! न पीलयन्ति मनसा तेषां कवित्वं कुतः॥७॥

अम्ब! = हे माता!
ये = जो
त्वाम् = तुम्हारा
वामे = बाईं हाथ में
पुस्तक = पुस्तक
धारिणीं = धारण करती हुई
दक्षिणे = दायें हाथ में
साक्षस्रजं = ~~[illegible]~~ जप माला धारण करती हुई
भक्तेभ्यो = भक्तों को
वरदान = वर देने के लिये
पेशलकरां = कोमल हाथ वाली
कर्पूरकुन्द = कर्पूर ~~[illegible]~~ और कुन्द पुष्प की भांति
उज्ज्वलां = दीप्तिमान
उज्जृम्भ = ~~दीप्तिमान~~ विकसित
अम्बुज पत्र = कमल के पत्ते जैसी
कान्त = सुन्दर
नयनं = नेत्रों ~~[illegible]~~ की
स्निग्ध - = मनमोहक
प्रभा - = दीप्ति से
आलोकिनीं = देखती हुई
अभयदां = ~~[illegible]~~ (जन्म मरण का) भय हटाती हुई (का) .x.
मनसा = मन से
न पीलयन्ति = अभ्यास नहीं करते हैं
तेषाम् = उन (अज्ञानियों) को।
कवित्वं = सर्वज्ञता
कुतः? = कहां मिल सकती है? अर्थात नहीं मिल सकती है।

इस ध्यान में देवी का चतुर्भुज ध्यान है और उनके हाथों ... और अभय दि...

ये त्वां पाण्डुर पुण्डरीक पटल स्पष्टाभिराम प्रभां,
सिञ्चन्तीमऽमृत द्रवैरिव शिरो ध्यायन्ति मूर्ध्नि स्थिताम् ।
अश्रान्तं विकट स्फुटाक्षर पदा निर्यान्ति वक्त्राम्बुजात्
तेषां भारति ! भारती सुरसरि कल्लोललोलोर्मिवत् ॥ ८॥

पदच्छेदः-

ये त्वां पाण्डुर पुण्डरीकपटल स्पष्ट अभिराम प्रभां,
सिञ्चन्तीम् अमृतद्रवैः इव शिरो ध्यायन्ति मूर्ध्नि स्थिताम्।
अश्रान्तं विकट स्फुट अक्षरपदा निर्यान्ति वक्त्र अम्बुजात्
तेषां भारति! भारती सुरसरित् कल्लोल लोल उर्मिवत्॥ ८॥

भारति! = हे सरस्वती!
ये = जो भक्त
त्वाम् = तुम्हारा
पाण्डुर = सफेद
पुण्डरीक- = कमल के
पटल = समूह जैसे
स्पष्ट = निर्मल (तथा)
अभिराम = सुन्दर
प्रभां = दीप्तिवाली,
अमृतद्रवैः = मानो अमृत की प्रवाहों से
इव = ~~[illegible]~~
शिरः = सिर ~~[illegible]~~ को
अर्थात द्वादशान्त को
सिञ्चन्तीम् = सींचती हुई,
मूर्ध्नि = ललाट में
स्थिताम् = ठहरी हुई (का)

ध्यायन्ति = ध्यान करते हैं
तेषां = उनके ~~मुख कमल से~~
वक्त्र- = मुख
अम्बुजात् = कमल से
विकट = बड़े (गम्भीर)
स्फुट = ~~[illegible]~~ स्पष्ट
अक्षरपदा = अक्षर और पदों वाली
भारती = वाणी
सुरसरित् = आकाश गंगा की
कल्लोललोल = चञ्चल
ऊर्मिवत् = तरंगों की तरह
अश्रान्त = ~~[illegible]~~ निरन्तर
निर्याति = निकलती है।

—

शब्दानां जननी त्वमत्र भुवने वाग्वादिनी त्युच्यसे,
त्वत्तः केशव वासव प्रभृतयोऽप्याविर्भवन्ति स्फुटम्।
लीयन्ते खलु यत्र कल्पविरमे ब्रह्मादयस्तेप्यमी
सा त्वं काचिदऽचिन्त्य रूप महिमा शक्तिः परा गीयसे ॥ १५॥

पदच्छेदः -

शब्दानां जननी त्वम् अत्र भुवने वाक् वादिनी इति उच्यसे
त्वत्तः केशव वासव प्रभृतयः अपि आविर्भवन्ति स्फुटम्।
लीयन्ते खलु यत्र कल्पविरमे ब्रह्मा आदयः ते अपि अमी
सा त्वं काचित् अचिन्त्य रूप महिमा शक्तिः परा गीयसे ॥ १५॥

त्वं = तुम
अत्र = इस
भुवने = जगत में
शब्दानां = सभी शब्दों की
जननी = उत्पन्न करने वाली
वाग्वादिनी = वाणियों की[1] उच्चारण करने वाली
इति = इस नाम से
उच्यते = कहलाती हो।
केशव = विष्णु
वासव = इन्द्र
प्रभृतयः = इत्यादि
अपि = भी
त्वत्तः = तुम से ही
आविर् = प्रकट
भवन्ति = होते हैं।
ते अमी = वही यह
ब्रह्मादयः = ब्रह्मा ~~इत्यादि~~[2] (विष्णु) इत्यादि

अपि = भी
कल्प = कल्प के
विरमे = अंत में
यत्र = जिस (तुम्हारे स्वरूप) में
खलु = निश्चय करके
लीयन्ते = लय हो जाते हैं
सा त्वम् = वही तुम
काचित = कोई (अलौकिक)
अचिन्त्य = चिन्तन से अतीत
रूप = रूप (और)
महिमा = महिमा वाली
परा शक्तिः = परा (उत्कृष्ट) शक्ति
गीयसे = गाई जाती हो।

---

1. चार प्रकार की वाणियाँ, परा, पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी हैं। यह सब [illegible] शक्ति का ही ~~प्रसार~~ प्रसार है और इसी के [illegible] स्थूल

सृष्टि की उत्पत्ति होती है।
(२) ब्रह्मा, विष्णु रुद्र जो सृष्टि, स्थिति और संहार के अधिकारी हैं आत्मा से ही निकलते हैं और उसी में लय हो जाते हैं।

देवानां त्रितयं त्रयी हुतभुजां शक्तित्रयं त्रिस्वरा
स्त्रैलोक्यं त्रिपदी त्रिपुष्करमथो त्रिब्रह्म वर्णास्त्रयः।
यत्किञ्चिज्जगति त्रिधा नियमितं वस्तु त्रिवर्गात्मकं
तत्सर्वं त्रिपुरेति नाम भगवत्यन्वेति ते तत्त्वतः ॥ २६॥

पदच्छेदः -

देवानां त्रितयं त्रयी हुतभुजां शक्तित्रयं त्रिस्वराः
त्रैलोक्यं च त्रिपदी त्रिपुष्करम् अथो त्रिब्रह्म वर्णाः त्रयः।
यत् किंचित् जगति त्रिधा नियमितं वस्तु त्रिवर्ग आत्मकम्
तत् सर्वं त्रिपुरा इति नाम भगवति! अन्वेति ते तत्त्वतः॥२६॥

भगवति! = हे भगवती!
देवानां त्रितयं = तीन देवता
(ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र)
हुतभुजां त्रयी = तीन अग्नि
(गार्हस्थ, हवन, श्मशान)
शक्ति त्रयं = तीन शक्तियां
(इच्छा, ज्ञान, क्रिया)
~~तीन स्वर =~~
त्रिस्वराः = तीन स्वर
(अ, इ, उ)
(उदात्त, अनुदात्त, स्वरित)
त्रैलोक्यं = तीन लोक
(भूः, भुवः, स्वः)
(परा, परापरा, अपरा)
त्रिपदी = तीन पद
(गायत्री, आलंधर, कामरूप)
त्रिपुष्करम् = तीन जल
(नाभि, हृदय, ललाट)
अथो = और

त्रिब्रह्म = तीन ब्रह्म
(नर, शक्ति, शिव)
(इडा, पिंगला, सुषुम्ना)
त्रयः वर्णाः = तीन वर्ण
(ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य)
जगति = जगत में
यत् = जो
किंचित् = कोई भी
वस्तु = पदार्थ
त्रिधा = तीन प्रकार से
नियमितं = नियम में बांधा गया है
तत्सर्वं = वह सब ही
तत्त्वतः = वास्तवता से
ते = तुम्हारे
त्रिपुरा = त्रिपुरा
इति = ~~[illegible]~~ ऐसे
नाम = नाम का
अन्वेति = अनुसरण करते हैं।

—

~~[illegible]~~

लक्ष्मीं राजकुले जयां रणभुवि क्षेमङ्करीमध्वनि,
क्रव्याद द्विप सर्प भाजि शावरीं कान्तार दुर्गे गिरौ ।
भूत प्रेत पिशाच जम्बुक भये स्मृत्वा महा भैरवीं
व्यामोहे त्रिपुरां तरन्ति विपद स्तारां च तोयप्लवे ॥ २७ ॥

पदच्छेदः-

लक्ष्मीं राजकुले जयां रणभुवि क्षेमङ्करीम् अध्वनि
क्रव्याद द्विपसर्पभाजिशावरीं कान्तार दुर्गे गिरौ ।
भूतप्रेत पिशाचजम्बुकभये स्मृत्वा महाभैरवीम्
व्यामोहे त्रिपुरां तरन्ति विपदः तारां च तोयप्लवे ॥ २७॥

राजकुले = राजकुल में
लक्ष्मीं = लक्ष्मी का,
रणभुवि = युद्धक्षेत्र में
जयां = जया रूप का,
क्रव्याद = चोर
द्विपः = हाथी
सर्पभाजि = सांपों से भरे
अध्वनि = मार्ग में
क्षेमंकरीम् = ~~कल्य~~ क्षेमंकरी
(कल्याणकारिणी) का
कांतार = कठिन
दुर्गे = दुर्गम
गिरौ = पहाड़ पर
शावरीं = शावरी रूप का,
भूत प्रेत- = भूतप्रेत
पिशाच - = पिशाच (और)
जम्बुक = गीदड़ इत्यादि के
भये = भय में,

महाभैरवी = महा भैरवी रूप का,
व्यामोहे = बड़े भय में
त्रिपुरां = त्रिपुरा रूप का,
तोय- = जल के
प्लवे = नाव में
तारां = (तुम्हारे) तारारूप
(तारनेवाली) का
स्मृत्वा = स्मरण करके (भक्त)
विपदः = आपदाओं को
तरंति = पार करते हैं ।
(अर्थात आपदाओं से छुटकारा
पाते हैं)

माया कुण्डलिनी क्रिया मधुमती काली कला मालिनी,
मातङ्गी विजया जया भगवती देवी शिवा शाम्भवी ।
शक्तिः शङ्करवल्लभा त्रिनयना वाग्वादिनी भैरवी
ह्रींकारी त्रिपुरा परापरमयी माता कुमारीत्यसि ॥ १८॥

पदच्छेदः -

माया कुण्डलिनी क्रिया मधुमती काली कला मालिनी
मातङ्गी विजया जया भगवती देवी शिवा शाम्भवी।
शक्तिः शङ्करवल्लभा त्रिनयना वाक् वादिनी भैरवी
ह्रींकारी त्रिपुरा परअपरमयी माता कुमारि इति असि ॥ १८॥

माया	= स्वातंत्र्य शक्ति,	शंकर	= शंकर की
कुंडलिनि	= मूलाधार शक्ति,	वल्लभा	= प्रिया,
क्रिया	= क्रिया शक्ति,	त्रिनयना	= (सूर्य, चन्द्र, अग्नि रूप) तीन नेत्रों वाली
मधुमती	= आनन्द शक्ति,		
काली	= सृष्टि, स्थिति, संहार शक्ति	वाग्वादिनी	= परा आदि वाणी रूप विमर्शमय
कला	= अमृतमय अमा कला,	भैरवी	= ~~भैरवी की शक्ति~~ (भरण, रवन, वमन करने वाली) भैरव की शक्ति
मालिनी	= अआदि क्षान्त वर्णमाला शक्ति,	ह्रींकारी	= ह्रींकार रूप (मायाबीज)
मातंगी	= मतंग ऋषि की कन्या	त्रिपुरा	= इडा, पिंगला, सुषम्ना रूप
		परापरमयी	= स्थूल सूक्ष्म रूप
विजया जया	= विजय जय रूप,	माता	= जगत् जननी
भगवती	= सर्व ऐश्वर्य मयी,	कुमारी	= भेद को नष्ट करने वाली
देवी	= क्रीडन शील,	इति	= इन इन नामों से
शिवा	= कल्याणं रूप,	असि	= तुम ही हो।
शाम्भवी शक्ति	= { शंभु की अभिन्न शक्ति,		

सावद्यं निरवद्यमस्तु यदि वा किं वानया चिन्तया
नूनं स्तोत्रमिदं पठिष्यति नरो यस्यास्ति भक्तिस्त्वयि ।
सञ्चिन्त्यापि लघुत्वमात्मनि दृढं सञ्जायमानं हठात्
त्वद्भक्त्या मुखरीकृतेन रचितं यस्मान्मयापि स्फुटम् ॥२२॥

पदच्छेद: -

सावद्यं निर् अवद्यम् अस्तु यदि वा किं वा अनया चिन्तया
नूनं स्तोत्रम् इदं पठिष्यति नरः यस्य अस्ति भक्तिः त्वयि।
सञ्चिन्त्य अपि लघुत्वम् आत्मनि दृढं सञ्जायमानं हठात्
त्वत् भक्त्या मुखरी कृतेन रचितं यस्मात् मया अपि स्फुटम्॥२२॥

अनया = इस
चिन्तया = चिन्ता से
किं? = क्या (लाभ है)?
सावद्यं = (चाहे) दोष सहित
यदि वा = ~~व~~ अथवा
निरवद्यं = दोष रहित
अस्तु = (यह स्तुति) हो,
यस्य = जिस पुरुष की
त्वयि = तुम में
भक्ति = भक्ति
अस्ति = है,
(स) नरः = (वह) मनुष्य
इदं = ~~यह~~ इस
स्तोत्रं = ~~स्तु~~ स्तोत्र को
नूनं = अवश्य
पठिष्यति = पढ़ेगा (विमर्श करेगा)

यस्मात् = क्योंकि
त्वत = तुम्हारी
भक्त्या = भक्ति से
मुखरी कृतेन = वाचाल बने हुये (1)
मया अपि = मैं ने भी
आत्मनि = अपने आप में
ध्रुवं = निश्चय करके
दृढं = दृढ़ता से
संजायमानं = उत्पन्न हुए
लघुत्वं = अल्पभाव को (2)
संचित्य = विचार करके (विमर्श करके)
अपि = भी
हठात् = हठ से
स्फुटं = (और) स्फुट भाव से
रचितम् = (इस स्तोत्र की) रचना की॥

1. दूसरा अर्थ = तीक्ष्ण विमर्श युक्त
2. दूसरा अर्थ = हल्कापन अर्थात शरीर, प्राण इत्यादि के अभिमान रहित।

इति श्री पञ्चस्तव्यां लघुस्तवः प्रथमः समाप्तः ॥

Approved for Print.

ये सिन्दूर पराग पुञ्जपिहितां त्वत्तेजसा द्यामिमाम् ,
उर्वीं चापि विलीन यावकरस प्रस्तार मग्नामिव ।
पश्यन्ति क्षणमऽप्यऽनन्य मनस स्तेषामऽनङ्ग ज्वर
क्लान्तास्त्रस्त कुरङ्ग पोतक दृशो वश्या भवन्ति स्फुटम् ॥ ६ ॥

पदच्छेदः

ये सिन्दूर पराग पुञ्ज पिहितां त्वत् तेजसा द्याम् इमाम्
उर्वीं च अपि विलीन यावकरस प्रस्तार मग्नाम् इव।
पश्यन्ति क्षणम् अपि अनन्यमनसः तेषाम् अनङ्ग ज्वर -
क्लान्ताः त्रस्त कुरङ्ग पोतक दृशः वश्याः भवन्ति स्फुटम् ॥ ६ ॥

ये = जो (भक्त)
त्वत् = तुम्हारे
तेजसा = तेज से
द्यां = आकाश को
सिन्दूर = सिन्दूर की
पराग = धूलि के
पुञ्ज = समूह से
पिहितां = छिपा हुआ
उर्वीं चापि = और पृथ्वी को भी
विलीन = विघले हुए
यावकरस = लाक्षारस के
प्रस्तार = विस्तार में
मग्नां इव = डूबी हुई जैसी
क्षणम् अपि = एक क्षण भी
पश्यन्ति = देखते हैं,
तेषां = उन

अनन्यमनसः = एकाग्र मनवाले (भक्तों को)
अनङ्ग = कामदेव के
ज्वर = सन्ताप से
क्लान्ताः = पीड़ित,
त्रस्त = डरे हुए
कुरंग = हिरण के
पोतक = बच्चों (की जैसी)
दृशः = आंखों वाली (सुन्दर स्त्रियां),
स्फुटं = प्रत्यक्षरूप में
वश्या = वश
भवन्ति = हो जाती हैं ॥

—

...तीरी में अोलुत

ये सिन्दूर पराग

चञ्चत्काञ्चन कुण्डलाङ्गदधरामाऽऽबद्धकाञ्ची स्रजं ,
ये त्वां चेतसि तद्गते क्षणमपि ध्यायन्ति कृत्वा स्थितिम् ।
तेषां वेश्मसु विभ्रमादहरहः स्फारी भवन्त्यश्चिरं
माद्यत्कुञ्जर कर्णताल तरलः स्थैर्यं भजन्ते श्रियः ॥ १०॥

पदच्छेदः -

चञ्चत् काञ्चन कुण्डल अङ्गद धराम् आबद्धकाञ्ची स्रजं
ये त्वां चेतसि तद्गते क्षणम् अपि ध्यायन्ति कृत्वा स्थितिम्।
तेषां वेश्मसु विभ्रमात् अहः अहः स्फारी भवन्त्यः चिरम्
माद्यत् कुञ्जर कर्णताल तरलाः स्थैर्यं भजन्ते श्रियः॥ १०॥

~~आर्भट्या = वीरवृत्ति से~~
~~चन्द्रिखण्ड = चन्द्रकला से~~
~~मण्डिते = सुशोभित~~
~~जटाजूटां = जटाजूट वाली,~~
~~नृमुण्ड = मनुष्य की खोपड़ी की~~
~~स्रजं = मालाधारी,~~
~~बन्धूकप्रसव = बन्धूक पुष्प जैसे~~
~~अरुण = लाल~~
~~अम्बरधरां = वस्त्र धारण किये हुए~~
~~प्रेतासने = प्रेतरूप आसन पर~~
अधसा

ये = जो (भक्त)
चंचत = चमकते हुए
कांचन = सोने के
कुंडल = बालियो (और)
अंगद = बाजूबन्दों को
धराम् = धारण किये हुए

काञ्ची = सोने की
स्रजं = तागडी
(आ) आबद्ध = पहने हुये
त्वां = तुम्हारे (स्वरूप का)
तद्गते = उसी (तुम्हारे स्वरूप में) लगे हुए
चेतसि = मन में
क्षणमपि = एक क्षण भी
स्थितिं कृत्वा = एकाग्रता पूर्वक
कृत्वा
ध्यायन्ति = ध्यान करते हैं
तेषां = उन (भक्तों) के
वेश्मसु = घरों में
अहरहः = सदा
स्फारी = विकास में
भवन्त्यः = आती हुई
माद्यत = मस्त
कुंजर = हाथी के
कर्णताल = कान पुटी जैसी

तरलाः = चञ्चल
श्रियः = लक्ष्मियां
विभ्रमात् = विवश होकर
चिरं = चिर काल तक
स्थैर्यं = स्थिरता को
भजन्ते = सेवन करती हैं।

अर्भटया शशिखण्ड मण्डित जटाजूटां नृमुण्ड स्रजं
प्रसवा बन्धूक (कुसुमा) रुणाम्बरधरां प्रेतासना ध्यासिनीम् ।
त्वां ध्यायन्ति चतुर्भुजां त्रिनयनामाऽऽपीन तुङ्ग स्तनीं
मध्ये निम्नबलि त्रयाङ्कित तनुं त्वद्रूप संवित्तये ॥ ११ ॥

पदच्छेदः -

अर्भटया शशिखण्ड मण्डित जटाजूटां नृमुण्ड स्रजं
प्रसव बन्धूक (कुसुम) अरुण अम्बरधरां प्रेत आसन अध्यासिनीम्।
त्वां ध्यायन्ति चतुर्भुजां त्रिनयनाम् आपीन तुङ्ग स्तनीम्
मध्ये निम्न वलि त्रय अङ्कित तनुं त्वत् रूप संवित्तये॥११॥

~~अर्भ~~ अर्भटया	= वीरवृत्ति से	स्तनीं	= स्तनों वाली,[2]
शशिखण्ड	= चन्द्रकला से	मध्ये	= मध्य भाग में
मंडित	= सुशोभित	निम्न	= सूक्ष्म (गहरे),
जटाजूटां	= जटाजूट वाली,	वलित्रय	= तीन ~~चक्रों के घेर~~ रेखाओं के
नृमण्ड	= मनुष्य की खोपड़ी की	अंकित	= चिह्न वाले (से से)
स्रजं	= मालाधारी	तनुं	= स्वरूप का
बन्धूकप्रसव	= ~~बन्ज~~ बन्धूक पुष्प जैसे	त्वत्-	= तुम्हारे
		रूप-	= स्वरूप के
अरुण	= लाल	संवित्तये	= जानने के लिये (भक्तजन)
अम्बरधरां	= वस्त्रधारण किये हुए		
		त्वां	= तुम्हें
प्रेतासन	= प्रेतरूप आसनपर[1]	ध्यायन्ति	= चिन्तन करते हैं
अध्यासिनी	= बैठने वाली।		
चतुर्भुजां	= चारभुजाओं वाली,		
त्रिनयनां	= तीन नेत्रों वाली, (१)		
आपीन-	= बडे		
तुङ्ग	= मोटे		

१. तीन नेत्र = सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि ।(२) माता की भांति जगत् को [illegible]पायन और आप्लावन देने वाली। तीन वलिय = इच्छा, ज्ञान तथा क्रिया।

जातोऽप्यऽल्प परिच्छदे क्षितिभुजां सामान्य मात्रे कुले
निःशेषावनि चक्रवर्ति पदवीं लब्ध्वा प्रतापोन्नत : ।
यद्विद्याधर वृन्द वन्दित पद : श्रीवत्सराजोऽभवत्
देवि! त्वच्चरणाम्बुज प्रणतिजः सोऽयं प्रसादोदय : ॥१२॥

पदच्छेदः-

जातः अपि अल्पपरिच्छदे क्षितिभुजां सामान्यमात्रे कुले
निःशेष अवनि चक्रवर्ति पदवीं लब्ध्वा प्रताप उन्नतः।
यत् विद्याधर वृन्दवन्दितपदः श्री वत्सराजः अभवत्
देवि! त्वत् चरण अम्बुज प्रणतिजः सः अयं प्रसाद उदयः॥१२॥

देवि ! = हे देवी!
क्षितिभुजां = ~~राजाओं के~~ क्षत्रियों के
सामान्यमात्रे = अति साधारण
कुले = कुल में (और)
अल्प = छोटे
परिच्छदे = ~~कुल~~ वंश में
जातः = उत्पन्न हुआ
अपि = भी
निःशेष = सारी
अवनि = पृथ्वी के
चक्रवर्ति = चक्रवर्ती
पदवीं = पदवी को
लब्ध्वा = पाकर
उन्नतः = ऊँचे
प्रताप = प्रतापवाला,
विद्याधर = विद्याधरों के
वृंद = समूह से

वन्दित = ~~प्रणाम किये~~ पूजे हुए
पदः = चरणों वाला
यत् = जो
श्रीवत्सराजः = श्रीवत्सराज
अभवत् = था (उसको)
सोऽयं = ~~वह~~ वही यह
प्रसाद = प्रसादका
उदयः = उदय
त्वत् = तुम्हारे
चरण = चरण
अम्बुज = कमलों के
प्रणतिजः = प्रणाम से
उत्पन्न हुआ था।

—

(13)

चण्डि ! त्वच्चरणाम्बुजार्चन विधौ बिल्वीदलोल्लुण्ठन
त्रुट्यत्कण्टक कोटिभिः परिचयं येषां न जग्मुः कराः ।
ते दण्डाङ्कुश चक्र चाप कुलिश श्रीवत्स मत्स्याङ्कितैः
जायन्ते पृथिवीभुजः कथमिवा म्भोज प्रभैः पाणिभिः ॥१३॥

पदच्छेदः -

चण्डि! त्वत् चरण अम्बुज अर्चन विधौ बिल्वीदल उल्लुण्ठन-
त्रुट्यत् कण्टक कोटिभिः परिचयं येषां न जग्मुः कराः।
ते दण्ड अङ्कुश चक्र चाप कुलिश श्रीवत्स मत्स्य अङ्कितैः
जायन्ते पृथिवीभुजः कथम् इव अम्भोज प्रभैः पाणिभिः॥१३॥

चण्डि! हे चण्डी!
त्वत् = तुम्हारे
चरण = चरण
अम्बुज = कमलों की
अर्चन = पूजा की
विधौ = विधि में
येषां = जिन(अभक्तों) के
कराः = हाथ
बिल्वीदल = बिल्वपत्र के
उल्लुण्ठन = तोडने से
त्रुट्यत् = चुभते हुए
कोटिभिः = करोडों
कंटक = कांटों से
परिचयं = अभ्यास को
न = नहीं
जग्मुः = प्राप्त हुए[1]

ते = वह (अभक्त)
दंड = दंड,
अंकुश = अंकुश,[2]
चक्र = चक्र,
चाप = धनुष,
कुलिश = कुल्हाडी,
श्रीवत्स = श्रीवत्सरत्न
मत्स्य = (और) मछली के
अंकितैः = चिन्हों ~~से युक्त~~ वाले
अम्भोजप्रभैः = कमल जैसे
पाणिभिः = हाथों से युक्त
पृथिवीभुजः = चक्रवर्ती राजा
कथं इव = किस प्रकार
जायन्ते = बन सकते हैं?

1. जिन्होंने देवी की पूजा के लिए कष्ट सहे उनको ही चक्रवर्ती राजा बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। अभक्त ऐसा फल प्राप्त नहीं कर सकते हैं।
...मे टोंग

P.T.O.

सामुद्रिक शास्त्रों की दृष्टि से दण्ड, अंकुश आदि के आकार हाथ पर होने ~~चक्रव~~ चक्रवर्ती राजा बनने के लक्षण हैं।

विप्राः क्षोणिभुजो विप्रास्तदितरे क्षीराज्यमध्वासवैः
त्वां देवि! त्रिपुरे! पराऽपरमयीं सन्तर्प्य पूजाविधौ ।
यां यां प्रार्थयते मनः स्थिरधियां तेषां त एव ध्रुवं
तां तां सिद्धिमवाप्नुवन्ति तरसा विघ्नैरविघ्नी कृताः ॥ १४॥

पदच्छेदः -

विप्राः क्षोणिभुजः विप्रः तत् इतरे क्षीर-आज्य मधु-आसवैः
त्वां देवि! त्रिपुरे! पर-अपरमयीं सन्तर्प्य पूजाविधौ।
यां यां प्रार्थयते मनः स्थिरधियां तेषां ते एव ध्रुवं
तां तां सिद्धिम् अवाप्नुवन्ति तरसा विघ्नैः अविघ्नी कृताः॥ १४॥

देवि! त्रिपुरे! = हे क्रीडनशील त्रिपुरा देवी!
विप्राः = ब्राह्मण,
क्षोणिभुजो = क्षत्रिय,
विशः = वैश्य (और)
तत् इतरे = इनके अतिरिक्त (जीवन् मुक्त)
क्षीर = दूध,
~~मधु~~ ~~[illegible]~~
आज्य = घी,
मधु = शहद (और)
आसवैः = चित् रस से
त्वां = तुम्
परापरमयीं = स्थूल और सूक्ष्म रूप देवी को
पूजाविधौ = पूजा की विधि में
संतर्प्य = (तुम को) तृप्त करके
तेषां = उन
स्थिरधियां = अटल बुद्धि वालों का
मनः = मन

यां यां = जिस जिस
सिद्धिं = सिद्धि को
प्रार्थयते = प्रार्थना करता है
तां तां = उस उस (सिद्धि को)
ते एव = वही (भक्त)
ध्रुवं एव = निश्चय करके ही
विघ्नैः = सब विघ्नों से
अविघ्नी- = निर्विघ्न
कृताः = ~~[illegible]~~ होकर
अवाप्नुवन्ति = प्राप्त करते हैं।

आई पल्लवितैः परस्परयुतैर्द्वित्रिक्रमाद्यक्षरैः,
काद्यैः क्षान्तगतैः स्वरादिभिरथो क्षान्तैश्च तैः सस्वरैः ।
नामानि त्रिपुरे! भवन्ति खलु यान्यत्यन्त गुह्यानि ते,
तेभ्यो भैरव पत्नि विंशति सहस्रेभ्यः परेभ्यो नमः ॥१९॥

पदच्छेदः —

आई पल्लवितैः परस्परयुतैः द्वि त्रि क्रम-आदि-अक्षरैः
क-आद्यैः क्ष-अन्त गतैः स्वर-आदिभिः अथो क्ष-अन्तैः च तैः सस्वरैः।
नामानि त्रिपुरे! भवन्ति खलु यानि अत्यन्त गुह्यानि ते
तेभ्यः भैरवपत्नि! विंशति सहस्रेभ्यः परेभ्यः नमः॥१९॥

त्रिपुरे! = हे त्रिपुरा देवी!
आई पल्लवितैः = आ और ई से लेकर प्रसर में आये हुये
परस्परयुतैः = आपस में मिले हुये
काद्यैः = क से लेकर
क्षान्त गतैः = क्ष तक
क्रमाद्यक्षरैः = क्रम के अक्षरों से
स्वरादिभिः ~~स्वरादिभिः~~ = आदि में स्वर रखकर
अथ = फिर
क्षान्तैः च = क्ष जिनके अन्त में है
तैः = उन (क से क्ष तक)
सस्वरैः = स्वरों सहित (अक्षरों से)
यानि = जो
अत्यन्त = बहुत ही
गुह्यानि = रहस्य
नामानि = नाम

ते = तुम्हारे
~~ख~~ खलु = निश्चय करके
भवन्ति = बनते हैं
भैरवपत्नि = हे भैरव की शक्ति
तेभ्यः = उन सब ~~नामों को~~
विंशति-सहस्रेभ्यः = बीस हज़ार से भी
परेभ्यः = अधिक (नामों को)
नमः = नमस्कार हो।

—

बोद्धव्या निपुणं बुधैः स्तुतिरियं कृत्वा मनस्तद्गतं,
भारत्यास्त्रिपुरेत्यनन्य मनसो यत्राद्यवृत्ते स्फुटम् ।
एक द्वि त्रि पद क्रमेण कथित स्तत्पाद संख्याक्षरैः → स्तत्पाद
मन्त्रोद्धार विधिर्विशेष सहितः सत्संप्रदायान्वितः ॥ २०॥

पदच्छेदः -

बोद्धव्या निपुणं बुधैः स्तुतिः इयं कृत्वा मनः तद्गतं
भारत्याः त्रिपुरा इति अनन्यमनसः यत्र आद्यवृत्ते स्फुटम्।
एक द्वि त्रि पद क्रमेण कथितः तत्पाद संख्या अक्षरैः
मन्त्र उद्धार विधिः विशेष सहितः सत्संप्रदाय अन्वितः॥२०॥

इयं	= यह	यत्र	= जिस स्तुति में
भारत्याः	=(सरस्वती) भगवती की	आद्यवृत्ते	= पहले ही श्लोक में
		एक द्वि त्रि	= पहले, दूसरे और तीसरे
स्तुतिः	= स्तुति	पदक्रमेण	= पदों के क्रम से
बुधैः	= ज्ञानवानों को	तत्	= उस (श्लोक) के
(अपने) निपुणं	= तीक्ष्ण	पाद	= पादों की
मनः	= मन को		
तद्गते कृत्वा	= उसी (देवी में) एकाग्र करके	संख्याक्षरैः	= गिनती के अक्षरों के अनुस्वार
		विशेषसहितः	= विशेषता के सहित
अनन्य मनसा	= (और) न किसी में लगाये हुए मन से	सत्संप्रदाय	= यथार्थ सम्प्रदाय अथवा गुरु क्रम से
		अन्वितः	= युक्त
		मंत्रोद्धार	= मंत्र के निकालने का
	(यह विमर्श करते हुए कि)	विधिः	= ढंग
त्रिपुरा इति	= त्रिपुरा देवी ही (सब का कारण है)	स्फुटम्	= प्रकट रूप से
		कथितः	= कहा है॥
बोद्धव्या	= जाननी चाहिए;		

—

ॐ

अथ चर्चस्तवो द्वितीयः ॥

नमस्त्रिपुर सुन्दर्यै

आनन्द सुन्दर पुरन्दर मुक्त माल्यं / मौलौ हठेन निहितं महिषासुरस्य ।
पादाम्बुजं भवतु मे विजयाय मञ्जु / मञ्जीर शिञ्जित मनोहरमम्बिकायाः ॥ १ ॥

पदच्छेदः -

आनन्द सुन्दर पुरन्दर मुक्तमाल्यं / मौलौ हठेन निहितं महिषासुरस्य ।
पाद अम्बुजं भवतु मे विजयाय मञ्जु / मञ्जीर शिञ्जित मनोहरम् अम्बिकायाः ॥ १ ॥

आनन्द	= आनन्द देने के कारण	अम्बिकायाः	= जगत माता का
		पादाम्बुजं	= चरण कमल
सुन्दर	= सुन्दर (~~और~~) प्रसन्न बने हुए	मे	= मेरी
पुरन्दर	= इन्द्र से (डाली हुई)	विजयाय	= विजय के लिए
मुक्तमाल्यं	= मोतियों की माला वाला,	भवतु	= हो ।

महिषासुरस्य = महिषासुर राक्षस के
मौलौ = सिर पर
हठेन = ~~हठ से~~ ज़ोर से (आग्रह से)
निहितं = रखा हुआ (तथा)
मञ्जु = सुन्दर
मञ्जीर = पायलों की
शिंजित = मीठी झंकार से
मनोहरम् = मन को मोहित करने वाला

सौन्दर्यविभ्रमभुवो भुवनाधिपत्य, सम्पत्तिकल्पतरवस्त्रिपुरे! जयन्ति ।
एते कवित्व कुमद प्रकरावबोध, पूर्णेन्दवस्त्वयि जगज्जननि प्रणामाः ॥२॥

पदच्छेदः -

सौन्दर्यविभ्रमभुवः भुवनआधिपत्य, सम्पत्तिकल्पतरवः त्रिपुरे! जयन्ति।
एते कवित्वकुमुद प्रकरअवबोध, पूर्ण इन्दवः त्वयि जगत्जननि! प्रणामाः ॥२॥

जगज्जननि = हे जगत की माता,
त्रिपुरे = त्रिपुरे
सौन्दर्य- = (आपके) सुन्दरता के
विभ्रम - = विकास की
भुवो = भूमियां ?
भुवन- = तीन भुवनों के
आधिपत्य- = स्वामिभाव रूपी
संपत्ति- = सम्पदा के पाने के लिए
कल्पतरवः = कल्पवृक्ष के समान (हैं)
कवित्व- = (तथा) सर्वज्ञता रूपी
कुमुद- = कुमुद पुष्पों के
प्रकार- = समूह को
अवबोध- = विकास में लाने के लिए

पूर्णेन्दवः = परिपूर्ण चन्द्रमा जैसी (हैं) (इस कारण)
त्वयि = (भक्तों के) तुम्हारे प्रति
एते = यह (बार बार किए हुए)
प्रणामाः = प्रणाम
जयन्ति = विजयशाली हैं"

देवी को बार बार प्रणाम करने से तीनों भुवनों का स्वामिभाव तथा सर्वज्ञता इत्यादि शक्तियां प्राप्त होती हैं।
सर्वज्ञता से सर्वकर्तृभाव, पूर्णता, व्यापकता तथा नित्यता भी समझ लेना चाहिए।

देवि! स्तुतिव्यतिकरे कृतबुद्धयस्ते, वाचस्पति प्रभृतयोऽपि जडीभवन्ति।
तस्मान्निसर्गजडिमा कतमोऽहमऽत्र, स्तोत्रं तव त्रिपुरतापन पत्नि! कर्तुम् ॥३॥

पदच्छेद: -

देवि! स्तुति व्यतिकरे कृतबुद्धयः ते
वाचस्पति प्रभृतयः अपि जडी भवन्ति।
तस्मात् निसर्गजडिमा कतमः अहम् अत्र
स्तोत्रं तव त्रिपुरतापन पत्नि! कर्तुम् ॥३॥

देवि! = हे देवी!
ते = तुम्हारी
स्तुति- = स्तुति करने के
व्यतिकरे = उद्योग में
कृतबुद्धयः = तीक्ष्ण बुद्धि वाले
वाचस्पति- = बृहस्पति
प्रभृतयः = इत्यादि (देववर्ग)
अपि = भी
जडी = असमर्थ
भवन्ति = हो जाते हैं,
तस्मात् = इस कारण.
त्रिपुर- = हे त्रिपुरासुर को
तापन- = मारने वाले
(शिव) की
पत्नि! = अभिन्न शक्ति।

अत्र = इस संसार में
तव = तुम्हारी
स्तोत्रं = स्तुति
कर्तुं = करने के लिए
निसर्ग- = स्वाभाविक
जडिमा = मन्दबुद्धि
अहं = मैं
कतमः = किस गिनती में हूँ।

मातस्तथापि भवतीं भवतीव्रताप-
विच्छित्तये स्तुतिमहार्णव कर्णधारः।
स्तोतुं भवानि स भवच्चरणारविन्द-
भक्तिग्रहः किमपि मां मुखरी करोति ॥ ४ ॥

पादच्छेदः-

मातः! तथा॒ऽपि भवतीं भवतीव्रताप-
विच्छित्तये स्तुतिमहा॒ऽर्णव कर्णधारः।
स्तोतुं भवानि! स भवत् चरण॒ऽरविन्द-
भक्तिग्रहः किम्॒ऽपि मां मुखरी करोति॥४॥

मातः! = हे माता!
तथापि = फिर भी
भव- = संसार के
तीव्र- = तीक्ष्ण
ताप- = संताप के
विच्छित्तये = नाश करने के लिए
स = वह
स्तुति- = स्तुति रूप (जो अज्ञानरूपी)
महार्णव - = बड़े सागर को (पार करने के लिये)
कर्णधारः = मल्लाह रूप है (तथा)
भवत् - = आप के
चरणविंद- = चरणकमलों की
भक्तिग्रहः = भक्ति का हठ

भवतीं = आप की
स्तोतुं = स्तुति करने के लिए
मां = मुझे
भवानि! = हे भवानी!
किमपि = कुछ कुछ
मुखरी = वाचाल
करोति = बनाता है।

सूते जगन्ति भवती भवती बिभर्ति
जागर्ति तत्क्षयकृते भवती भवानि ।
मोहं भिनत्ति भवती भवती रुणद्धि
लीलायितं जयति चित्रमिदं भवत्याः ॥ ५॥

पदच्छेदः –

सूते जगन्ति भवती भवती ~~भवानि!~~ बिभर्ति
जागर्ति तत्क्षयकृते भवती भवानि!
मोहं भिनत्ति भवती भवती रुणद्धि
लीलायितं जयति चित्रम् इदं भवत्याः॥५॥

भवानि ! = हे भवानि
भवती = आपही
जगन्ति = जगतों की
(plural) सूते, = सृष्टि करती हो,
भवती = आप ही
(जगन्ति) = जगतों को
बिभर्ति, ~~धारण करती हो~~
= धारण (स्थिति) करती हो
भवती = आप ही
(singular) तत्क्षयकृते = उस जगत को नाश करने के लिए
जागर्ति, = जागती रहती हो. (संहार)
भवती = आपही
मोहं = मोह को
भिनत्ति, = नाश करती हो, (अनुग्रह)
भवती = आपही
रुणद्धि, = स्वरूप का गोपन करती हो। (पिधान)

इदं यह
चित्रं आश्चर्यमय
भवत्याः आपकी
लीलायितं क्रीडा
जयति विजयशाली है।

यस्मिन्मनागऽपि नवाम्बुजपत्रगौरि !
गौरि! प्रसादमधुरां दृष्टामाऽदधासि।
तस्मिन्निरन्तरमनङ्ग शरावकीर्ण -
सीमन्तिनी नयन सन्ततय: पतन्ति ॥ ६ ॥

पदच्छेद:-

यस्मिन् मनाक् अपि नव अम्बुज पत्र गौरि!
गौरि! प्रसादमधुरां दृष्टामष्ट आदधासि।
तस्मिन् निरन्तरम् अनङ्ग शर अवकीर्ण -
सीमन्तिनी नयन सन्ततय: पतन्ति ॥ ६ ॥

नव - = (हे) नये
अम्बुज- = खिले हुए कमल के
पत्र- = पत्ते जैसी
गौरि! = (निर्मल) गौरी!
यस्मिन् = जिस भक्त पर
मनाक् अपि = थोड़ी भी
प्रसाद - = अनुग्रह के कारण
मधुरां = आनन्ददायक
दृष्टां = दृष्टि
आदधासि, = डालती हो,
तस्मिन् = उस भक्त पर
(हे) गौरि! = हे पार्वती!
अनङ्ग - = कामदेव के
शर - = बाणों के कारण
अवकीर्ण- = चंचल बनी हुई
सीमन्तिनी- सुन्दर शक्तियों की
नयन- दृष्टि की

सन्ततय: = पंक्तियां
निरन्तरं = लगातार
पतन्ति = पड़ती हैं॥
अर्थात सुन्दर अणिमादिक शक्तियाँ उसके वश में हो जाती हैं॥

पृथ्वीभुजोऽप्युदयनप्रवरस्य तस्य
विद्याधरप्रणति चुम्बित पादपीठः।
यच्चक्रवर्ति पदवी प्रणयः स एष
त्वत्पाद पङ्कज रजः कणजः प्रसादः ॥७॥

पदच्छेदः-

पृथ्वीभुजः अपि उदयनप्रवरस्य तस्य
विद्याधरप्रणति चुम्बित पादपीठः।
यत् चक्रवर्ति पदवी प्रणयः स एष
त्वत् पाद पङ्कजरजः कणजः प्रसादः॥७॥

तस्य	= उस	स	= वह (प्राप्ति)
उदयन- प्रवरस्य	= { उदयन प्रवर नामवाले	एष	= इस
		त्वत्-	= तुम्हारे
पृथ्वीभुजः	= सम्राट् को	पाद-	= चरण
अपि	= भी	पंकज-	= कमलों की
यत्	= जो	रजः-	= धूलि के
विद्याधर-	= विद्याधरों के	कणजः	= कणों से उत्पन्न हुआ
प्रणति-	= प्रणामों से	प्रसादः	= अनुग्रह था।
चुम्बित-	= चूमे हुए		
पादपीठः	= चरणों के आसन वाला (था)		
चक्रवर्ति-	= (उसको जो) चक्रवर्ती राजा की		
पदवी-	= पदवी की		
प्रणयः	= प्राप्ति (थी)		

कल्पद्रुम प्रसव कल्पित चित्र पूजा-
मुद्दीपित प्रियतमामद रक्त गीतिम् ।
नित्यं भवानि! भवतीमुप वीणयन्ति
विद्याधराः कनकशैल गुहा गृहेषु ॥ ८॥

पदच्छेदः-

कल्प द्रुम प्रसव कल्पित चित्र पूजाम्
उद्दीपित प्रियतमा मदरक्त गीतिम्।
नित्यं भवानि! भवतीम् उपवीणयन्ति
विद्याधराः कनकशैलगुहागृहेषु ॥ ८॥

भवानि ! = हे भवानी !
विद्याधराः = विद्याधर (देवता) वर्ग (नित्य)
कल्पद्रुम- = कल्पवृक्ष के
प्रसव - = फूलों से
कल्पित - = की हुई (उनकी)
चित्रपूजां = आश्चर्यजनक पूजा वाली (तथा) करते हैं,
उद्दीपित- = चमकाये हुए
प्रियतमा - = अत्यन्त प्रिय
मद- = मस्ती के
रक्त- = राग से भरी हुई हुए
गीतिम् = गीतों वाली गीत गाते हैं
भवतीं = (तथा) आपको (देवि विद्याधर) को

कनक शैल- = सुमेरु पर्वत की
गुहा- = गुफा रूपी
गृहेषु = घरों में
नित्यं = निरन्तर
उपवीणयन्ति = सूक्ष्म वीणा पर गायन करते हैं।

लक्ष्मी वशीकरण कर्मणि कामिनीना-
माऽकर्षण व्यतिकरेषु च सिद्धमन्त्रः ।
नीरन्ध्र मोहतिमिर च्छिदुर प्रदीपो
देवि! त्वदऽङ्घ्रि जनितो जयति प्रसादः ॥९॥

पदच्छेदः-

लक्ष्मीवशीकरण कर्मणि कामिनीनाम्
आकर्षण व्यतिकरेषु च सिद्धमन्त्रः।
निःरन्ध्रमोह तिमिर छिदुर प्रदीपः
देवि! त्वद् अङ्घ्रि जनितः जयति प्रसादः॥९॥

देवि!	= हे देवी!	त्वद्-	= तुम्हारे
लक्ष्मी-	= लक्ष्मी को	अंघ्रि-	= चरणों से
वशीकरण-	= वश करने के	जनितो	= उपजा हुआ
कर्मणि	= काम में (तथा)	प्रसादः	= अनुग्रह
कामिनीनां	= सुन्दर शक्तियों को	जयति	= जयशील है।
आकर्षण -	= अपने और खेंचने के		
व्यतिकरेषु	= उद्योग में		
सिद्ध मंत्रः	= न चूकने वाले मंत्र रूप		
च	= और		
नीरन्ध्र-	= बहुत ही घने		
मोह-	= मोह रूपी		
तिमिर-	= अन्धेरे को		
छिदुर-	= नाश करने के लिए		
प्रदीपः	= दीपक रूप		

देवी के चरणों का अनुग्रह प्राप्त करने से भोग तथा मोक्ष लक्ष्मी अवश्य प्राप्त होती है। अलौकिक शक्तियों को वश करने में यह अचूक मंत्र जैसा काम देता है और सांसारिक मोह रूपी अंधेरे से बचने के लिए ज्ञान प्रकाश देकर दीपक का

P.T.O.

देवि! त्वदङ्घ्रिनख रत्नभुवो मयूखा:
प्रत्यग्र मौक्तिकरुचो मुदमुद्वहन्ति ।
सेवानति व्यतिकरे सुरसुन्दरीणां
सीमन्त सीम्नि कुसुमस्तव कायितं यै : ॥ १० ॥

पदच्छेद: -

देवि! त्वत् अङ्घ्रि· नख रत्न भुवः मयूखाः
प्रत्यग्र मौक्तिकरुचः मुदम् उद्वहन्ति।
सेवा नति व्यतिकरे सुरसुन्दरीणाम्
सीमन्त सीम्नि कुसुमस्तवकायितं यैः॥१०॥

देवि! = हे देवी!
त्वत्- = तुम्हारे
अंघ्रि- = चरणों के
नखरत्न- = नाखुन रूपी रत्नों से
भुवो = उत्पन्न हुई
मयूखाः = किरणें
प्रत्यग्र- = नित्य नवीन
मौक्तिक- = मोतियों की
रुचो- = दीप्ति वाले
मुदम् = हर्ष को
उद्वहन्ति = धारण करती हैं

यैः = जिन (किरणों) ने
सुरसुन्दरीणाम् = देवस्त्रियों की
सीमन्त- = [1]मांग के
सीम्नि = स्थान को
सेवा- = सेवा (अभ्यास)
नति- = प्रणाम (भक्ति) के
व्यतिकरे = और समाविष्ठ से
कुसुम- = फूलों के
स्तवक- = गुच्छे जैसा (सुन्दर)
कायितम् = रचाया है।

कौन तर है

(1) मांग- सिर के बालों की बीच वाली रेखा जिसको कश्मीरी में सुम कहते हैं

रूपं तव स्फुरित चन्द्र मरीचि गौर -
मा ऽ लोकते शिरसि वागधिदैवतं यः ।
निः सीम सूक्ति रचना मृत निर्भरस्य
तस्य प्रसाद मधुराः प्रसरन्ति वाचः ॥ १२ ॥

पदच्छेदः -

रूपं तव स्फुरित चन्द्र मरीचि गौरम्
आलोकते शिरसि वाक् अधिदैवतं यः ।
निः सीम सु उक्ति रचना अमृत निर्भरस्य
तस्य प्रसाद मधुराः प्रसरन्ति वाचः ॥ १२ ॥

यः = जो (भक्त)
तव = तुम्हारे
स्फुरित- = विकसित (परिपूर्ण)
चन्द्र- = चन्द्रमा की
मरीचि- = किरणों जैसे
गौरं = श्वेत (निर्मल)
वाक् = (सभी) वाणियों के
अधिदैवतं = अधिष्ठाता रूप
रूपं = स्वरूप को
शिरसि = सिर में (द्वादशान्त में)
आलोकते = देखे (ध्यान से एकाग्र होकर साक्षात्कार करे)
तस्य = उस (भक्त) की
प्रसाद- = तुम्हारे अनुग्रह से
मधुराः = मीठी (परमार्थ पूर्ण)
वाचः = वाणियां
प्रसरन्ति = निकलती हैं (जो कि)
निः सीम = सीमा रहित (अनन्त)
सूक्ति- = सुन्दर वाणियों की
रचना- = रचना रूपी
अमृत- = अमृत से
~~भि~~
निर्भरस्य = परिपूर्ण (होती हैं)

मूर्ध्नि स्फुरत्तुहिन दीधिति दीप्ति दीप्तं
मध्ये ललाटममरायुध रश्मि चित्रम् ।
हृच्चक्र चुम्बिहुतभुक्कणिकानुरूपं
ज्योतिर्यदेतदिदमम्ब ! तव स्वरूपम् ॥ २२ ॥

पदच्छेद:-

मूर्ध्नि स्फुरत् तुहिन दीधिति दीप्ति दीप्तं
मध्ये ललाटम् अमर आयुध रश्मि चित्रम्।
हृत् चक्र चुम्बि हुतभुक् कणिका अनुरूपं
ज्योतिः यत् एतत् इदम् अम्ब! तव स्वरूपम् ॥२२॥

अम्ब !	= हे माता	हृच्चक्र-	= हृदय चक्र को
मूर्ध्नि	= सिर पर	चुम्बि-	= स्पर्श करने वाले
स्फुरत-	= चमकते हुये	हुतभुक्-	= अग्नि के
~~तुहिन~~	~~किरणोंयुक्त~~	कणिका-	= कण के
तुहिन-	= शीतल	अनुरूपं	= सदृश,
दीधिति-	= किरणों युक्त	यत	= जो
	(चन्द्रमा) के	एतत	= यह
दीप्ति-	= प्रकाश से	ज्योतिः	= प्रकाश है
See M.S. दीप्तं	= चमकता हुआ,	इदम्	= यह
ललाटं	= माथे के	तव	= तुम्हारा ही
मध्ये	= बीच में	स्वरूपम्	= स्वरूप है ॥
अमरायुध-	= इन्द्रधनुष की		
रश्मि-	= किरणों के समान		
चित्रं	= विचित्रता वाला (रंगारंग) तथा		

please take care to complete (?) the book before 15 May 1962 as agreed to [illegible] the essential (?) [illegible] progress of printing is very slow [illegible] the book should be [illegible] the copy and [illegible] be delivered to me [illegible] Shivananda (?) 14-3-62

सिन्दूरपांसु पटल च्छुरितामिव द्यां
त्वत्तेजसा जतुरस स्नपितामिवोर्वीम् ।
यः पश्यति क्षणमपि त्रिपुरे! विहाय
व्रीडां मृडानि! सुदृशस्तमनु द्रवन्ति ॥ २३ ॥

पदच्छेदः-

सिन्दूर पांसु पटल छुरितां इव द्यां
त्वत् तेजसा जतु रस स्नपितां इव उर्वीम्।
यः पश्यति क्षणम् अपि त्रिपुरे! विहाय
व्रीडां मृडानि! सुदृशः तम् अनु द्रवन्ति॥ २३॥

त्रिपुरे! = हे त्रिपुरा देवी! (तीनों लोकों तथा तीनों शरीरों में व्यापिनी)
यः = जो भक्त
द्यां = आकाश को ~~[illegible]~~
सिन्दूर- = सिन्दूर की
पांसु- = सूक्ष्म धूलि के
पटल- = समूह से
छुरितां = रंगा हुआ (अवच्छादित)
इव = जैसा,
उर्वीं = पृथ्वी को
त्वत्- = तुम्हारे
तेजसा = तेज से
जतुरस- = [1] महावर के रस में
स्नपितां = धुली हुई (उस रस में डूबी हुई)

इव = जैसी
क्षणमपि = एक क्षण मात्र भी
पश्यति = देखे,
मृडानि! = हे देवी!
सुदृशः = सुन्दर नेत्रों वाली (उत्तम शक्तियां)
व्रीडां = लज्जा को
विहाय = छोड़कर (अर्थात विवश होकर)
तम् = उस (भक्त) के
अनुद्रवन्ति = पीछे दौड़ती हैं। (उसके वश में हो जाती हैं)

---

(1) महावर जिसे कश्मीरी में 'अलुत' कहते हैं

मातर्मुहूर्तमपि यः स्मरति स्वरूपं
लाक्षारसप्रसरतन्तुनिभं भवत्याः ।
ध्यायन्ति यं तनय मनसस्तमनङ्ग तप्ताः
प्रद्युम्नसीम्नि सुभगत्वगुणं तरुण्यः ॥ १४ ॥

पदच्छेदः-

मातः! मुहूर्तम् अपि यः स्मरति स्वरूपं
लाक्षारस प्रसर तन्तु निभं भवत्याः।
ध्यायन्ति अनन्यमनसः तं अनङ्ग तप्ताः
प्रद्युम्न सीम्नि सुभगत्वगुणं तरुण्यः॥१४॥

मातः! = हे माता!
यः = जो (भक्त)
लाक्षा- = लाख के
रस- = रस से
प्रसर- = निकली हुई
तन्तु- = सूक्ष्मतार के
निभं = समान
भवत्याः = आपका
स्वरूपं = स्वरूप
मुहूर्तं = एक क्षणमात्र
अपि = भी
स्मरति = विमर्श करे,
सुभगत्व- = सुन्दर
गुणं = गुणों वाले
तं = उस (भक्त) का
अनंग- = कामदेव से
तप्ताः = पीडित (चंचल)
तरुण्यः = उत्तम स्त्रियाँ

अनन्य- = एकाग्र
मनसः = मन वाली कर के
(अर्थात उस भक्त की
ओर लगाये हुए मन वाली)
प्रदयुम्न- = कामदेव के
सीम्नि = स्थान पर
(अर्थात उसी को काम
देव मानकर)
~~तरुण्यः = उत्तम स्त्रियाँ~~
ध्यायन्ति = उसका ध्यान करती हैं ॥

द

योऽयं चकास्ति गगनार्णव रत्नमिन्दु -
र्योऽयं सुराऽसुरगुरु : पुरुष: पुराण : ।
यद्वाममर्धमिदमऽन्धक सूदनस्य
देवि ! त्वमेव तदिति प्रतिपादयन्ति ॥ १५ ॥

पदच्छेद: -

य: अयं चकास्ति गगन अर्णव रत्नं इन्दु:
य: अयं सुर असुर गुरु: पुरुष: पुराण:।
यत् वामं अर्धं इदं अन्धक सूदनस्य
देवि! त्वम् एव तत् इति प्रतिपादयन्ति॥१५॥

देवी ! = हे देवी !
यो = जो
अयं = यह
गगन- =(चित्) आकाश रूपी
अर्णव- = समुद्र का
रत्नम् = रत्न
इन्दु: = चन्द्रमा है,
चकास्ति — चमकता
यो =(और) जो
सुर- = देवताओं
असुर- = तथा राक्षसों का
गुरु: = गुरु
पुराण: = आदि सिद्ध
पुरुष: = पुरुष है,

यत् = तथा जो
अन्धक- = कामदेव के
सूदनस्य = मारने वाले (शिव) का
वामम् = बायां
अर्धं =(शरीर का) आधा है,
तत = यह (सभी कुछ)
त्वम् एव = तुम ही हो
~~इति = इस बात को सिद्ध करते है~~
इति = इस बात को
प्रतिपादयन्ति = सिद्ध करते हैं।

इच्छानुरूपमऽनुरूप गुण प्रकर्षं
सङ्कर्षणि ! त्वमनुसृत्य यदा बिभर्षि ।
जायेत स त्रिभुवनैकगुरुस्तदानीं
देवः शिवोऽपि भुवनत्रय सूत्रधारः ॥ १६ ॥

पदच्छेदः-

इच्छा अनुरूपं अनुरूप गुण प्रकर्षं
सङ्कर्षणि! त्वम् अनुसृत्य यदा बिभर्षि।
जायेत स त्रिभुवन एक गुरुः तदानीम्
देवः शिवः अपि भुवनत्रयसूत्रधारः॥१६॥

~~(1)~~ संकर्षणि ! = हे आकर्षण कारिणी !

त्वम् = आप

यदा = जब

इच्छा- अनुरूपं = { ~~स्वेच्छे~~ स्वतंत्र इच्छा के अनुसार

अनुसृत्य.

अनुरूप- गुण- = { ~~समान~~ योग्य गुणों के

प्रकर्षं = उत्कर्ष ~~वाले~~ को

जोड़? ?| ~~अनुसृत्य = अनुसरण करके~~

बिभर्षि = धारण करती हो

तदानीं = तब ही

स = वह

देवः = (क्रीड़ाशील) देवता

शिवः = शिव

अपि = भी

त्रिभुवन- = तीनो भुवनों का

एक- = अद्वितीय

गुरुः = पिता (तथा)

भुवनत्रय- = तीनों भुवन रूपी (नाटक का)

सूत्रधारः = सूत्रधार

जायेत = बनता है।

रुद्राणि ! विद्रुममयीं प्रतिमामिव त्वां
ये चिन्तयन्त्यरुणकान्तिमनन्यरूपाम् ।
तानेत्य पक्ष्मलदृशः प्रसभं भजन्ते ५३
कण्ठावसक्तमृदुबाहुलतास्तरुण्यः ॥ १७ ॥

पदच्छेदः —

रुद्राणि! विद्रुममयीं प्रतिमां इव त्वां
ये चिन्तयन्ति अरुणकान्तिम् अनन्यरूपाम्।
तान् एत्य पक्ष्मलदृशः प्रसभं भजन्ते
कण्ठ अवसक्त मृदु बाहु लताः तरुण्यः ॥ १७ ॥

रुद्राणि। = हे रुद्रकी रोदन द्रावण करने वाली सृष्टि संहार करने वाली शक्ति।
ये = जो भक्त
त्वां = आपको
अरुण- = प्रातः काल के सूर्य (की तरह लाल)
कान्तिम् = दीप्ति वाली
अनन्य- = अनुपम
रूपाम् = रूपवाली
विद्रुममयीं = रुद्राक्षमालाधारी
प्रतिमां = मूर्ति का
इव = जैसा
चिन्तयन्ति = विमर्श करते हैं,

पक्ष्मलदृशः = सुन्दर नेत्रों वाली

2
तरुण्यः = युवतियाँ
तान् = उनके
एत्य = पास जाकर
प्रसभं = बलपूर्वक
भजन्ते = (उनका) सेवन करती हैं।

1
कण्ठ = (उन भक्तों के) गले में
अवसक्त = डाली हुई
मृदु = कोमल
बाहुलताः = लता जैसे बाहुओं वाली
~~आसक्त = डालती हैं॥~~

सुन्दर नेत्रों वाली युवतियाँ हठ से उनके पास जाकर उनका भजन करती हैं। धारण करती [illegible] उनके गले में अपनी कोमल बाहुओं को डालती हैं। [illegible] [illegible] को [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] करती हैं।

X

त्वद्रूपमुल्लसित दाडिमपुष्प रक्त -
मुद्भावयेन्मदन दैवतमक्षरं यः ।
तं रूपहीनमपि मन्मथ निर्विशेष -
मालोकयन्त्युरुनितम्बभरास्तरुण्यः ॥ २८॥

पदच्छेदः -

त्वत् रूपं उल्लसित दाडिम पुष्प रक्तम्
उद्भावयेत् मदनदैवतम् अक्षरं यः ।
तं रूपहीनम् अपि मन्मथ निर्विशेषम्
आलोकयन्ति उरुनितम्ब भराः तरुण्यः ॥ २८ ॥

यः = जो (भक्त)
त्वत्- = तुम्हारे
रूपं = स्वरूप को
~~उल्लसित~~
उल्लसित- = खिले हुए
दाडिम- = अनार के
पुष्प- = फूल (के सदृश)
रक्तम् = लाल वर्ण, वाले,
अक्षरं = अविनाशी
त्वत् = तुम्हारे
रूपं = स्वरूप को
मदनदैवतं = कामदेव की जैसी
उद्भावयेत् = भावना करे
तम् = उस (भक्त) को
रूपहीनम् } यदि वह कुरूप
अपि } भी हो

उरुनितम्बभराः = भारी वक्षःस्थलों वाली (ज्ञानक्रिया शक्तियुक्त)
तरुण्यः = युवतियां (शक्तियां)
~~आलोकयन्ति = देखती हैं। सभी शक्तियां उस भक्त के अधीन रहती हैं। उसी पुरुष को कामदेव मानती हैं।~~
मन्मथ- } = कामदेव के
निर्विशेषं } समान
आलोकयन्ति = देखती हैं।

सभी शक्तियां उस भक्त के अधीन रहती हैं। उसी पुरुष को कामदेव मानती हैं।

ध्याताऽसि हैमवति! येन हिमांशुरश्मि-
मालाऽमलद्युतिरऽकल्मष मानसेन ।
तस्याऽविलम्बमऽनवद्यमऽनल्पकल्प-
मल्पैर्दिनैः सृजसि सुन्दरि! वाग्विलासम् ॥२९॥

पदच्छेदः-

ध्याता असि हैमवति! येन हिम अंशु रश्मि-
माला अमल द्युतिः अकल्मष मानसेन।
तस्य अविलम्बम् अनवद्यम् अनल्प कल्पम्
अल्पैः दिनैः सृजसि सुन्दरि! वाक् विलासम् ॥२६॥

हैमवति! = हे हिमालय की पुत्री! बर्फ जैसी निर्मल!
येन = जिस (भक्त) द्वारा
अकल्मष - = निर्मल
मानसेन = मन से (एकाग्रचित होकर)
हिमांशु - = चन्द्रमा की
रश्मि - = किरणों के
माला - = समूह जैसी (तुम)
अमल - = निर्मल
द्युतिः = दीप्तिः वाली का
~~ध्याता = ध्यान किया गया है~~
ध्याता = ध्यान (विमर्श)
असि = किया गया हो

सुन्दरि! = हे सुन्दर शक्तियों से शोभायमान देवी!
तस्य = उस (भक्त) का (तुम)
अविलम्बं = शीघ्र ही (तत्काल)
अनवद्यं = दोष रहित प्रकार से
अनल्पकल्पं = अनन्त
वाग् = वाणियों का
विलासम् = विकास
अल्पैः = थोड़े ही
~~दिनैः~~ दिनैः = दिनों में
सृजसि = उत्पन्न करती हो।

आधार मारुत निरोध वशेन येषां
सिन्दूर रञ्जित सरोज गुणानुकारि ।
तीव्रं हृदि स्फुरति देवि! वपुस्त्वदीयं
ध्यायन्ति तानिह समीहित सिद्धसाध्याः ॥ २० ॥

पदच्छेदः-

आधारमारुत निरोध वशेन येषां
सिन्दूर रञ्जित सरोज गुण अनुकारि ।
तीव्रं हृदि स्फुरति देवि! वपुः त्वदीयं
ध्यायन्ति तान् इह समीहित सिद्ध साध्याः ॥ २० ॥

देवि! = हे चितस्वरूपिणी जगत को चमकाने वाली!
येषां = जिन (भक्तों) के
हृदि = हृदय में
आधार- = मूलाधार के
मारुत- = वायु के
निरोध- वशेन = रोकने के (वश करने के) कारण
सिन्दूर- = सिन्दूर से
रंजित- = रंगे हुए
सरोज- = कमल के
गुण- = सूक्ष्म तार
अनुकारि = जैसा ।

त्वदीयं = तुम्हारा
तीव्रं = दीप्तिमान
वपुः = स्वरूप
स्फुरति = प्रकट हो जाता है
तान् = उन (भक्तों) को
इह = इस संसार में
समीहित- = चाहे हुए (अभिलक्षित)
सिद्ध- = सिद्धदेव (और)
साध्याः = साध्य देव
ध्यायन्ति = ध्यान करते हैं ।
ऐसे भक्त ही को अपना इष्ट देव मानते हैं ।

त्वामैन्दवीमिव कलामनुभालदेश-
मुद्भासिताम्बरतलामऽवलोकयन्तः।
सद्यो भवानि! सुधियः कवयो भवन्ति
त्वं भावनाहितधियां कुलकामधेनुः ॥ २१ ॥

पदच्छेदः -

त्वाम् ऐन्दवीम् इव कलाम् अनुभालदेशाम्
उद्भासित अम्बरतलाम् अवलोकयन्तः।
सद्यः भवानि! सुधियः कवयः भवन्ति
त्वम् भावना आहितधियां कुलकामधेनुः ॥२१॥

भवानि! = हे ओंकार की व्यापक शक्ति!
त्वां = तुम्हें
ऐन्दवीम् = चन्द्रमा की
कलाम् = (अमा) कला के
इव = समान
अनुभाल- = माथे की
देशाम् = जगह पर
उद्भासित- = चमकाये हुए
अम्बरतलाम् = (चित) आकाश वाली को
अवलोकयन्तः = प्रत्यक्ष विमर्श करते हुए
सुधियः = ज्ञानी बुद्धिमानजन
सद्यः = शीघ्र ही
कवयः = सर्वज्ञ
भवन्ति = बन जाते हैं।
त्वं = आप
भावना = श्रद्धा
आहित = धारण किए हुए
धियां = बुद्धिवालों को
कुल- = सभी
कामधेनुः = कामनाओं की पूरणा करने वाली हो ॥

त्वां व्यापिनीति सुमना इति कुण्डलीति
त्वां कामिनीति कमलेति कलावतीति ।
त्वां मालिनीति ललितेत्य पराजितेति
देवि! स्तुवन्ति विजयेति जयेत्युमेति ॥ २२ ॥

पदच्छेदः-

त्वां व्यापिनी इति सुमना इति कुण्डली इति
त्वां कामिनी इति कमला इति कलावती इति।
त्वां मालिनी इति ललिता इति अपराजिता इति
देवि! स्तुवन्ति विजया इति जया इति उमा इति ॥ २२ ॥

देवि! = हे देवी!
त्वां = आपको
व्यापिनी = सब में व्यापक
इति
सुमना = सुन्दर आशय वाली
इति
कुण्डली = कुण्डलिनी शक्ति,
इति
त्वाम् = आपको
कामिनी = इच्छा शक्ति
इति
कलावती = कलाओं युक्त
इति
कमला = संकोच विकास मय
इति

त्वाम = आपको
मालिनी = मालाकार
इति
ललिता = सुन्दर
इति
अपराजिता = न किसी से परास्त हुई
इति
विजया = सब पर जय पाने वाली
इति
जया = जय देने वाली
इति = इन इन नामों से
स्तुवन्ति = लोग स्तुति करते हैं ॥

विजय = defeat

ये चिन्तयन्त्यरुण मण्डल मध्यवर्ति
रूपं तवाम्ब! नव यावक पङ्क पिङ्गम् ।
तेषां सदैव कुसमायुधबाण भिन्ना ~~वक्ष~~-
वक्षःस्थला मृगदृशो वशगा भवन्ति ॥ २३ ॥

पदच्छेदः-

ये चिन्तयन्ति अरुण मण्डल मध्यवर्ति
रूपं तव अम्ब! नव यावक पङ्क पिङ्गम्।
तेषां सदा एव कुसुम आयुध बाण भिन्न -
वक्षः स्थला मृगदृशः वशगाः भवन्ति॥ २३॥

अम्ब! = हे माता!
ये = जो (भक्त)
अरुण- = सूर्य
मण्डल- = मण्डल के
मध्यवर्ति = बीच रहने वाले
नव- = नवीन
यावकपंक- घुले हुए महावर जैसे
पिंगम् लाल
तव = तुम्हारे
रूपं = स्वरूप का
चिन्तयन्ति = चिन्तन (विमर्श) करते हैं
तेषां = उन (भक्तों) को

कुसुमायुध- = कामदेव के
बाण- = बाणों से
भिन्न- = छलनी बने हुए
वक्षःस्थलाः = छाती वाली (हृदय वाली)
मृगदृशः = सुन्दर नेत्रों वाली (उत्तम स्त्रियां)
सदैव = नित्य ही
वशगाः = वश
भवन्ति = हो जाती हैं॥

उत्तप्त हेम रुचिरे ! त्रिपुरे ! पुनीहि
चेतश्चिरन्तनमघौघवनं लुनीहि ।
कारागृहे निगड बन्धन पीडितस्य
त्वत्संस्मृतौ झटिति मे निगडास्त्रुटयन्तु ॥ २४ ॥

पदच्छेद:-

उत्तप्त हेम रुचिरे ! त्रिपुरे ! पुनीहि
चेत: चिरन्तनम् अघ-ओघ वनं लुनीहि ।
कारागृहे निगड बन्धन पीडितस्य
त्वत् संस्मृतौ झटिति मे निगडा: त्रुटयन्तु ॥ २४ ॥

उत्तप्त- = हे आग में तपाये हुए
हेम- = (निर्मल) सोने के समान
रुचिरे ! = दीप्ति वाली !
त्रिपुरे ! = हे त्रिपुरा !
पुनीहि, = (मुझको) पवित्र बना
चेत: = मेरे मन में स्थित
चिरन्तनम् = अनन्त जन्मों के
अघौघ- = पापों के घने
वनं = जंगल को
लुनीहि = काटो;
(जिससे कि)

* कारागृहे = (शरीररूपी) जेलखाने में
निगड- = बेडियों के
बन्धन- = बन्धनों से
पीडितस्य = पीडित हुए (मुझे)
त्वत्- = मुझे आपको
संस्मृतौ = स्मृति करते ही
(स्वरूप का विमर्श करते ही)
झटिति = तत्क्षणात
निगडा: = बन्धन
त्रुटयन्तु = टूट जायँ,
(मैं मुक्त हो जाऊँ) ॥

* अभिलाष रूपी बेडियां

पूर्वाणि! सर्वजन वन्दित पाद पद्मे!
पद्मच्छद च्छवि विडम्बित नेत्र लक्ष्मि!
निष्पाप मूर्ति जनमानस राजहंसि!
हंसि त्वमापदमऽनेकविधां जनस्य ॥ २५ ॥

पदच्छेदः-
पूर्वाणि! सर्वजन वन्दित पाद पद्मे!
पद्म छद छवि विडम्बित नेत्रलक्ष्मि!
निष्पापमूर्ति जन मानस राजहंसि!
हंसि त्वम् आपदम् अनेकविधां जनस्य ॥२५॥

पूर्वाणि! = हे संहार कारिणी!
सर्वजन- = सब लोगों से
वन्दित- = प्रणाम किये हुए
पादपद्मे! = चरण कमलों वाली,
पद्मच्छद- = कमल पत्रों की
छवि- = शोभा के से
विडम्बित- = एक समान बने हुए
नेत्रलक्ष्मि! = नेत्रों की शोभावाली!
निष्पापमूर्त्ति- = पापरहित (पवित्र अंतःकरणोंवाले)
जन- = भक्तजनों के
मानस- = मन रूपी मानसरोवर की

राजहंसि! = हे राजहंसि!!
त्वम् = आप
जनस्य = शरणागत भक्तों के
अनेकविधां = हर प्रकार की
आपदं = आपदाओं को
हंसि = नष्ट करती हो॥

त्वत्पाद पङ्कजरजः प्रणिपात पूतैः
पुण्यैरनल्प मतिभिः कृतिभिः कवीन्द्रैः।
क्षीरक्षपाकर दुकूल हिमावदाता
कैरप्यवापि भुवन त्रितयेऽपि कीर्तिः॥ २६॥

पदच्छेदः -

त्वत्पाद पङ्कजरजः प्रणिपात पूतैः
पुण्यैः अनल्प मतिभिः कृतिभिः कवि इन्द्रैः।
क्षीर क्षपाकर दुकूल हिम अवदाता
कैः अपि अवापि भुवन त्रितये अपि कीर्तिः॥ २६॥

त्वत् - = तुम्हारे
पाद - = चरण
पंकज - = कमलों की
रजः - = धूलि को
प्रणिपात - = धारण होने से
पूतैः = हटे हुए पापों वाले,
पुण्यैः = पवित्र बने हुए, (अंतःकरणों वाले)
अनल्प - = बड़ी
मतिभिः = बुद्धि वाले,
कृतिभिः = क्रियाशाली
कवीन्द्रैः = महान कवियों (भक्तों) ने
कैरपि = कुछ विरले ही (ऐसे भक्तों ने)

भुवन - त्रितयेऽपि = { तीनों ही भुवनों में भी
क्षीर - = दूध
क्षपाकर - = चन्द्रमा,
दुकूल - = रेशम (और)
हिम - = बर्फ (जैसी)
अवदाता = निर्मल
कीर्तिः = यश।
अवापि = प्राप्त किया॥

त्वद्रूपैक निरूपणप्रणयिता बन्धो दृशोस्त्वद्गुण -
ग्रामाकर्णनरागिता श्रवणयोस्त्वत्संस्मृतिश्चेतसि ।
त्वत्पादार्चनचातुरी करयुगे त्वत्कीर्तनं वाचि मे
कुत्रापि त्वदुपासनव्यसनिता मे देवि! मा शाम्यतु ॥ २७ ॥

पदच्छेदः -

त्वत् रूप एक निरूपण प्रणयिता बन्धः दृशोः त्वत् गुण -
ग्राम आकर्णन रागिता श्रवणयोः त्वत् संस्मृतिः चेतसि।
त्वत् पाद अर्चन चातुरी करयुगे त्वत् कीर्तनं वाचि मे
कुत्र अपि त्वत् उपासन व्यसनिता मे देवि! मा शाम्यतु ॥२७॥

देवि! = हे देवी!
मे = मेरे
दृशोः = नेत्रों में
त्वत्- = तुम्हारे
रूप- = स्वरूप का
एक- = केवल
निरूपण = साक्षात्कार करने के
प्रणयिता- = प्रेमभाव का
बन्धः = लगाव (रहे),
(मे) श्रवणयोः = (मेरे) कानों में
त्वत्- = तुम्हारे
गुण- = गुणों के
ग्राम- = समूह के (अनन्त)
आकर्णन- = सुनने का
रागिता = राग(हो),
(मे) चेतसि = (मेरे) मन में
त्वत्- = तुम्हारा
संस्मृतिः = बारबार स्मरण(हो),
(मे) करयुगे = (मेरे) दोनों हाथों में
त्वत्- = तुम्हारे
पाद- = चरणों की
अर्चन- = पूजा की
चातुरी = चतुरता (हो),
मे वाचि = मेरी वाणी में
त्वत्- = तुम्हारा
कीर्तनं = गुणगान (हो)।
कुत्र = किसी देश, काल या अवस्था में
अपि = भी
मे = मुझे
त्वत्- = तुम्हारी
उपासन- = उपासना करने का
व्यसनिता = शौक
मा = मत
शाम्यतु = कम हो जाय॥

उद्दाम काम परमार्थ सरोज षण्ड—
चण्ड द्युतिद्युतिमुपासित षट् प्रकाराम् ।
मोह द्विपेन्द्र कदनोद्यत बोध सिंह—
लीलागुहां भगवतीं त्रिपुरां नमामि ॥ २८ ॥

पदच्छेदः—

उद्दाम काम परमार्थ सरोज षण्ड-
चण्डद्युतिद्युतिम् उपासित षट् प्रकाराम्।
मोहद्विप इन्द्र कदन उद्यत बोध सिंह-
लीला गुहां भगवतीं त्रिपुरां नमामि॥२८॥

उद्दाम- = उत्कृष्ट
काम- = इच्छा के
परमार्थ- = परमार्थ रूपी
सरोज- = कमल
षण्ड- = समूह (को विकसित करने) के लिए
चण्डद्युति- = सूर्य की जैसी
द्युतिम् = दीप्ति (तेज) वाली,
उपासित- = उपासना की हुई
षट्प्रकाराम् = छः प्रकार से (पांच ज्ञानेन्द्रिय और मन द्वारा)
मोह = मोह (अज्ञान) रूपी
द्विपेन्द्र- = हाथी के
कदन- = मारने के लिए
उद्यत = तैयार,
बोध- = ज्ञान रूपी
सिंह = शेर की
लीलागुहां = क्रीडा स्थान
भगवतीं = भगवती
त्रिपुरां = त्रिपुरां को
नमामि = (मैं) प्रणाम करता हूँ"

गणेशा वटुकस्तुता रतिसहाय कामान्विता
स्मरारि वरविष्टरा कुसुमबाणबाणैर्युता ।
अनङ्ग कुसुमादिभिः परिवृता च सिद्धैस्त्रिभिः
कदम्बवनमध्यगा · त्रिपुरसुन्दरी पातु नः ॥ २६

पदच्छेदः -

गणेश वटुक स्तुता रतिसहाय काम अन्विता
स्मरअरि वर विष्टरा कुसुमबाण बाणैः युता।
अनङ्ग कुसुम आदिभिः परिवृता च सिद्धैः त्रिभिः
कदम्बवनमध्यगा · त्रिपुरसुन्दरी पातु नः॥ २६॥

गणेश- = ~~अ~~ गणेश (प्राण)
वटुक- = (और) भैरव (अपान) से
स्तुता = स्तुति की हुई,
रति- = रति (बुद्धि)
सहाय- = सहित
कामान्विता = कामदेव (मन) के सम्बन्धवाली,
स्मरारि- = शिव (जैसा)
वर- = उत्तम ~~आस~~
विष्टरा = आसन वाली,
कुसुमबाण- = कामदेव के
बाणैः- = बाणों
युता = युक्त (अर्थात मन की तेज़ और चंचल वृत्तियों युक्त)
~~अ~~ अनङ्ग- = कामदेव के
कुसुमादिभिः = फूलों इत्यादि से (अर्थात मन की वृत्तियों से)
च = और
सिद्धैस्त्रिभिः = तीन सिद्धों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश ~~से~~ अथवा समान, उदान, व्यान) से
परिवृता = परिवारित की हुई
कदम्बवन- = कदम्बवन ~~में~~ के (अर्थात माया रूपी भेद को)
मध्यगा = बीच में गई हुई
त्रिपुरसुन्दरी = त्रिपुरसुन्दरी भगवती
नः = हमें
पातु = पालन करे॥

१। परिवारित = परिवार है जिस का

यः स्तोत्रमेतदनुवासरमीश्वरायाः
श्रेयस्करं पठति वा यदि वा शृणोति ।
तस्येप्सितं फलति राजभिरीड्यतेऽसौ
जायेत स प्रियतमो हरिणेक्षणानाम् ॥ ३०

पदच्छेदः

यः स्तोत्रम् एतत् अनुवासरम् ईश्वरायाः
श्रेयःकरं पठति वा यदि वा शृणोति।
तस्य ईप्सितं फलति राजभिः ईड्यते असौ
जायेत स प्रियतमः हरिण ईक्षणानाम् ॥ ३०॥

यः	= जो (भक्त)	असौ	= वह
ईश्वरायाः	= भगवती का	राजभिः	= राजाओं से
एतत्	= यह	ईड्यते	= पूजा जाता है,
श्रेयस्करं	= कल्याणकारी	स	= (और) वह
स्तोत्रं	= स्तोत्र	हरिणेक्षणानाम्	= सुन्दर स्त्रियों का
अनुवासरं	= प्रतिदिन (निरन्तर)	प्रियतमो	= अत्यन्त प्यारा
पठति	= पढ़े, पढ़ता है	जायेत	= बनता है॥
यदि वा	= या यदि		
शृणोति	= सुने सुनता है		
तस्य	= उसके		
ईप्सितं	= वांछित (मनोरथ)		
फलति	= सफल हो जाते हैं।		

हरिण = हिरण की जैसी
ईक्षणानाम् = आँखों वाली
(सुन्दर और चंचल
स्त्रियों) की
प्रियतमो = अत्यन्त प्यारा
जायते = बनता है

ब्रह्मेन्द्र रुद्र हरिचन्द्र सहस्र रश्मि-
स्कन्द द्विपानन हुताशन वन्दितायै ।
वागीश्वरि! त्रिभुवनेश्वरि! विश्वमात-
रन्तर्बहिश्च कृतसंस्थितये नमस्ते ॥ ३२ ॥

पदच्छेद:-

ब्रह्मा इन्द्र रुद्र हरि चन्द्र सहस्र रश्मि-
स्कन्द द्विप आनन हुताशन वन्दितायै।
वाक् ईश्वरि! त्रिभुवन ईश्वरि! विश्वमातः
अन्तः बहिः च कृत संस्थितये नमः ते ॥३२॥

वाक्- ईश्वरि! = हे वाणियों की स्वामिनी सरस्वती, परा रूप!
त्रिभुवन- = तीनों भुवनों की
ईश्वरि! = स्वामिनी,
विश्वमातः! = जगत माता!
ब्रह्मा- = ब्रह्मा,
इन्द्र- = इन्द्र,
रुद्र- = रुद्र,
हरि- = विष्णु,
चन्द्र- = चन्द्रमा,
सहस्ररश्मि = सूर्य,
स्कन्द- = कुमार,

द्विपानन- = गणेश, (और)
हुताशन- = अग्नि से
वन्दितायै = प्रणाम की हुई
अन्तर = अन्दर (अन्तःकरण में
बहिश्च = और बाहर (बहिष्करण में)
कृत- = की हुई
संस्थितये = स्थिति वाली अर्थात ठहरी हुई
ते = तुझे तुम को
नमः = नमस्कार हो॥

P. T. O.

इति श्रीपञ्चस्तव्यां चर्चस्तवो द्वितीयः समाप्तः ॥

ईत श्रीआचार्य विरचितः श्रीपञ्चस्तव्यां चर्चस्तवो
द्वितीयः श्रीराम शैव आश्रम विरचिता व भाषाटीका
०/ फतह कदल
श्रीनगर काश्मीर

ॐ

अथ तृतीयो घटस्तवः ~~॥३॥~~ 1

ॐ नमस्त्रिपुरसुन्दर्यै ॥

देवि! त्र्यम्बक पत्नि! पार्वति! सति! त्रैलोक्य मातः! शिवे!
शर्वाणि! त्रिपुरे! मृडानि! वरदे! रुद्राणि! कात्यायिनि!
भीमे! भैरवि! चण्डि! शर्वरि! कले! कालक्षये! शूलिनि!
त्वत्पाद प्रणतानऽनन्य मनसः पर्याकुलान्पाहि नः ॥ १ ॥

पदच्छेदः- देवि! त्र्यम्बकपत्नि! पार्वति! सति! त्रैलोक्यमातः! शिवे!
शर्वाणि! त्रिपुरे! मृडानि! वरदे! रुद्राणि! कात्यायनि!
भीमे! भैरवि! चण्डि! शर्वरि! कले! कालक्षये! शूलिनि!
त्वत्पादप्रणतान् अनन्यमनसः परिआकुलान् पाहि नः॥१॥

देवि! = हे देवी (क्रीडा शील)!

त्र्यम्बक-पत्नि! = हे (तीन नेत्रों वाले) शिव की पत्नी! (अभिन्न शक्ति)

पार्वति! = हे पार्वती (हिमालय की बेटी)!

सति! = हे सत्ता वाली! (सत रूप)

त्रैलोक्य-मातः! = हे तीन लोकों की माता।

शिवे! = हे कल्याण कारिणी।

शर्वाणि! = हे शर्व अवतार की शक्ति (संहार कारिणी)!

त्रिपुरे! = हे त्रिपुरा देवी! (तीनों शरीरों में व्यापक)

मृडानि! = हे शिव की शक्ति! ~~शक्ति (भोग तथा मोक्ष रू~~

वरदे! = हे (भोग तथा मोक्ष रूप) वर देने वाली!

रुद्राणि! = हे रुद्र की शक्ति! (1)

कात्यायनि! = हे कात्यायनि!

भीमे! = हे भयानक रूप वाली (दुष्टों के लिए) ~~(दुष्टों के लिए)~~

भैरवि! = हे भैरव (शिव) की शक्ति!

चण्डि! = हे तेजस्वी रूप वाली!

शर्वरि! = हे शिव की शक्ति!

P.T.O

कले ! = हे अम्बा काला !

कालक्षये ! = हे काल को नाश करने वाली !

शूलिनि ! = हे त्रिशूल ~~धारण करने वाली~~ !
(इच्छा, ज्ञान क्रिया) धारिणी

त्वत्पाद- = तुम्हारे चरणों
प्रणतान् में शरण गए हुए
~~अन~~

अनन्य मनसः = एकाग्र और किसी में
मन वालों मन न लगाये हुए

परि पर्या- = चारों ओर से
आकुलान् (हर प्रकार) व्याकुल

नः = हम भक्तों की
पाहि = पालना करो।

उन्मत्ता इव सग्रहा इव विषव्यासक्तमूर्च्छा इव
प्राप्तप्रौढमदा इवाति विरहग्रस्ता इवार्ता इव ।
ये ध्यायन्ति हि शैलराजतनयां धन्यास्त एकाग्रत-
स्त्यक्तोपाधि विवृद्धरागमनसो ध्यायन्ति वामभ्रुवः ॥ २ ॥

पदच्छेदः- उन्मत्ताः इव सग्रहाः इव विष व्यासक्तमूर्च्छाः इव
प्राप्तप्रौढमदाः इव अतिविरहग्रस्ताः इव आर्ताः इव।
ये ध्यायन्ति हि शैलराजतनयां ~~क्ष~~ धन्याः ते एकाग्रतः
त्यक्त उपाधि विवृद्धरागमनसः ध्यायन्ति वामभ्रुवः ॥२॥

नशे से चोर

उन्मत्ता इव = ~~पागल~~ जैसे,
सग्रहा इव = पाविष्ट जैसे,
विष- = ज़हर
व्यासक्त- = लगने से
मूर्च्छा = मूर्च्छित
इव = जैसे,
प्राप्त- = प्राप्त हुए
प्रौढ = तीव्र
मदा = नशे वाले
इव = जैसे,
अति- = बहुत ही चिर काल से)
विरह- = (अत्यंत प्रेमी की) विरह (की पीड़ा से)
ग्रस्ता इव = ग्रस्त जैसे (उसी पीड़ा में डूबे हुए),
आर्ता इव = आर्त जैसे,
ये = जो भक्त
हि = निश्चय करके
शैलराज- = हिमालय की
तनयां = पुत्री (पार्वती) ~~का~~ (पर्वत के समान न टलने वाली) को

ध्यायन्ति = (एकाग्र होकर) ध्यान करते हैं
ते = वे (भक्त)
धन्याः = सौभाग्यशाली हैं
एकाग्रतः = समाहितता के कारण
त्यक्त- = छोड़े हुए
उपाधि- = शरीर की व्याधि (तथा)
विवृद्ध- = बढ़े हुए
राग- = प्रेम भरे
मनसः = मन वाले,
~~अ~~ = (ऐसे भक्तों का)
वामभ्रुवः = शिव की शक्तियां (इच्छा-ज्ञान-क्रिया)
ध्यायन्ति = ध्यान करती हैं (उस भक्त को प्राप्त होती हैं) ॥

[illegible] और उत्सुकता के कारण विरही ~~[illegible]~~ जैसे

देवि त्वां सकृदेव यः प्रणमति क्षोणीभृतस्तं नम-
न्त्याजन्म स्फुरदङ्घ्रि-पीठविलुठत्कोटीरकोटिच्छटाः ।
यस्त्वामर्चति सोऽर्च्यते सुरगणैर्यः स्तौति स स्तूयते
यस्त्वां ध्यायति तं स्मरार्तिविधुरा ध्यायन्ति वामभ्रुवः ॥३॥

पदच्छेदः- देवि! त्वां सकृत् एव यः प्रणमति क्षोणीभृतः तं नमन्ति
आजन्म स्फुरत् अङ्घ्रि-पीठ विलुठत् कोटीर कोटि छटाः।
यः त्वाम् अर्चति सः अर्च्यते सुरगणैः यः स्तौति सः स्तूयते
यः त्वां ध्यायति तं स्मर आर्ति विधुराः ध्यायन्ति वामभ्रुवः॥३॥

देवी!	= हे देवी !	यः	= जो
यः	= जो (भक्त)	त्वां	= तुम्हे
त्वां	= तुम्हें	अर्चति	= पूजा करता है
सकृत् एव	= एक बार (ही निरन्तर छेद रहित) ही	सः	= वह
		सुरगणैः	= देवताओं के समूहों से
प्रणमति	= प्रणाम करता है	अर्च्यते,	= पूजा जाता है,
तं	= उस (भक्त) को	यः	= जो
आजन्म-	= जन्म से ही	स्तौति	= स्तुति करता है
स्फुरत्-	= विकास में आये हुए	स	= वह
अङ्घ्रि-पीठ-	= चरणों के पीठ पर (पादपीठ पर)	स्तूयते	= स्तुति किया जाता है,
		यः	= जो
		त्वां	= तुम्हें
विलुठत्-	= लढ़कते हुए	ध्यायति	= ध्यान करता है (एकाग्रचित से लीन हो जाता है)
कोटीर-	= ताज की		
कोटि-	सिरों की (चोटियों की)		
छटाः	= शोभावाले	तं	= उसको
क्षोणीभृतः	= (चक्रवर्ती) राजा	स्मर-	= ~~स्मरण करने की~~ कामदेव
		आर्ति-	= पीड़ा ~~आयास~~ से
नमन्ति,	= नमस्कार करते हैं	विधुरा	= चंचल बनी हुई

वामभ्रुवः = ~~[illegible]~~ सुन्दर शक्तियाँ
देवियां

ध्यायन्ति = ध्यान करती हैं
(उसके वश हो जाती
हैं)

ध्यायन्ति ये क्षणमपि त्रिपुरे! हृदि त्वां
लावण्य यौवन धनैरपि विप्रयुक्ताः।
ते विस्फुरन्ति ललितायतलोचनानां
चित्तैकभित्तिलिखित प्रतिमाः पुमांसः ॥४॥

पदच्छेदः - ध्यायन्ति ये क्षणम् अपि त्रिपुरे! हृदि त्वां
लावण्ययौवन धनैः अपि विप्रयुक्ताः।
ते विस्फुरन्ति ललित आयत लोचनानां
चित्त एक भित्ति लिखित प्रतिमाः पुमांसः॥४॥

त्रिपुरे!	= हे देवी।	चित्ते	मन रूपी
ये	= जो	एक-	केवल एक ही
लावण्य-	= सुन्दरता,	भित्ति-	आधार पर
यौवन-	= जवानी (तथा)	लिखित-	खिंची हुई
धनैः	= धनों से	प्रतिमाः	मूर्त्तियां जैसे
विप्रयुक्ता	= हीन	विस्फुरन्ति	प्रकट होते हैं

अपि = भी
क्षणम् = थोड़ी देर के लिए
अपि = भी
हृदि = अपने हृदय में (समाहित होकर)
त्वां = तुम्हारा
ध्यायन्ति = ध्यान करते हैं
ते = वे (भक्त)
पुमांसः = पुरुष
ललित- = अति सुन्दर (प्राप्त करने योग्य)
आयत- = बड़ी (सर्वज्ञता से शोभित)
लोचनानां = नेत्रों वाली (ज्ञान वाली) युवतियों के

एतं किंनु दृशा पिबाम्युत विशाम्यस्याङ्ग मङ्गै निजैः,
किंवामुं निगलाम्यनेन सहसा किं वैकतामाश्रये।
तस्येत्थं विवशो विकल्पघटनाकूतेन योषिज्जनः
किं तद्यन्न करोति देवि! हृदये यस्य त्वमावर्तसे ॥ ५॥

पदच्छेदः- एतं किं नु दृशा पिबामि उत विशामि अस्य अङ्गः अङ्गैः निजैः
किं वा अमुं निगलामि अनेन सहसा किं वा एकताम, आश्रये
तस्य इत्थं विवशः विकल्पघटना आकूतेन योषित् जनः
किं तत् यत् न करोति देवि! हृदये यस्य त्वम् आवर्तसे ॥५॥

देवि! = हे देवी,
यस्य = जिस (भक्त) के
हृदये = हृदय में
त्वम् = आप
आवर्तसे = वास करती हो
(अपने अनुग्रह का
संचार करती हो)
~~तस्य = उस (भक्त) का~~
एतं = इस (भक्त) को
किं = क्या
नु = निश्चय ही
दृशा = नेत्रों द्वारा
पिबामि, = पी जाऊँ
(टिकटिकी बांध
कर देखती रहूँ)?
उत = अथवा
अस्य = इस के
अङ्गम = अंग में
निजैः = अपने
अंगैः = अंगों से
विशामि = प्रवेश करूँ
(आलिंगित होकर
एकता प्राप्त करूं)?
वा = या
किं = क्या
अमुं = इस पुरुष को
निगलामि = निगल जाऊँ
(इसको अपने
स्वरूप से अभिन्न
बनाऊँ)?
वा = या
किंवा = क्या
अनेन = इस पुरुष के साथ
सहसा = जल्दी ही (तत्क्षण)
एकताम् = ऐक्य भाव का
आश्रये = आश्रय लूँ?
तस्य = उस (भक्त के बारे में)
इत्थं = इस इस प्रकार के
विकल्प- = विचारों की
घटना- = रचना के

P.T.O.

आकूतेन = प्रयोजन से
योषितजनः = शिव की शक्तियां
विवशाः = बेबस (हो जाती हैं)
तत् = (फिर) वह
किं = कौनसा कार्य है
यत = जो कार्य कि
न करोति = (वह शक्तियां
उस भक्त के लिए सिद्ध)
नहीं करती हैं?

योषितजनः = युवतियां (जवान स्त्रियां) अर्थात वह शक्तियां जो शिव को अपना आधार रूप स्वामि मानती हैं। यह नित्यता के गुण से परिपूर्ण हैं इस कारण उनका जवान रहना अर्थात बूढ़ी होकर मर न जाना स्वतः ही सिद्ध है॥

विश्वव्यापिनि यद्वदीश्वर इति स्थाणावनन्याश्रयः
शब्दः शक्तिरिति त्रिलोकजननि! त्वय्येव तथ्यस्थितिः।
इत्थं सत्यपि शक्नुवन्ति यदिमाः क्षुद्रा रुजो बाधितुं
त्वद्भक्तानऽपि नक्षिणोषि च रुषा तद्देवि! चित्रं महत्॥६॥

पदच्छेदः- विश्वव्यापिनि यत् वत् ईश्वरः इति स्थाणौ अनन्याश्रयः
शब्दः शक्तिः इति त्रिलोकजनानि! त्वयि एव तथ्यस्थितिः।
इत्थं सति अपि शक्नुवन्ति यत् इमाः क्षुद्राः रुजः बाधितुं
त्वत् भक्तान् अपि न क्षिणोषि च रुषा तत् देवि! चित्रं महत्॥६॥

त्रिलोकजननी! = हे तीन लोकों की माता!
यद्वत = जिस प्रकार
विश्वव्यापिनि = जगत में व्याप्ति करने ~~वाली~~ वाले
स्थानौ = नित्य शिव के विषय में
अनन्याश्रयः = दूसरे के आश्रय की अपेक्षा न करने वाला (स्वतंत्र)
ईश्वरः = ईश्वर (ऐश्वर्यशाली)
इति शब्दः = इस प्रकार का शब्द (प्रयुक्त होता है);
(इसी प्रकार)
शक्तिः = शक्ति (शिव का सार)
इति शब्दः = यह शब्द
त्वयि एव = तुम्हारे ही विषय में

तथ्य स्थितिः = परमार्थ स्थिति वाला है (सत्य रूप से प्रयुक्त हो सकता है)।
इत्थं = इस प्रकार (यह बात)
सति अपि = होने पर भी
यत = जो
इमाः = यह
क्षुद्राः = तुच्छ
रुजो = रोग आदि
त्वत = तुम्हारे
भक्तान = भक्तों को
अपि = भी
बाधितुं = रुकावट पैदा करने में
शक्नुवन्ति = समर्थ बनते हैं
च (त्वम्) = और (तुम)
रुषा = क्रोधित होकर (उन रोगादिकों को)
न ~~क्षिणोषि~~ = नहीं
क्षिणोषि = नष्ट करती हो

P.T.O.

देवि ! = हे देवी !
तत् = वह
महत् = बड़ा ही
चित्रम् = आश्चर्य है।

इन्दोर्मध्यगतां मृगाङ्कसदृशच्छायां मनोहारिणीं
पाण्डूत्फुल्लसरोरुहासनगतां स्निग्धप्रदीपच्छविम् ।
वर्षन्तीममृतं भवानि भवतीं ध्यायन्ति ये देहिन-
स्ते निर्मुक्तरुजो भवन्ति विपदः प्रोज्झन्ति तान्दूरतः ॥७॥

पदच्छेदः - इन्दोः मध्यगतां मृगअङ्कसदृशछायां मनोहारिणीम्
पाण्डु उत्फुल्ल सरोरुह आसन गतां स्निग्ध प्रदीप छविम् ।
वर्षन्तीम् अमृतं भवानि! भवतीं ध्यायन्ति ये देहिनः
ते निर्मुक्तरुजः भवन्ति विपदः प्रोज्झन्ति तान् दूरतः ॥ ७ ॥

~~भवानि~~

भवानि!	= हे देवी!	अमृतं	= (इस प्रकार) अमृत
ये	= जो	वर्षन्तीं	= बरसाती हुई
देहिनः	= शरीरधारी	(ऐसे स्वरूप का)	
भवतीं	= आपके स्वरूप का	ध्यायन्ति,	= एकाग्र चित होकर ध्यान करते हैं
इन्दोः	= चन्द्रमा के	ते	= वे (जीव, भक्त)
मध्यगतां	= बीच में स्थित,	निर्मुक्त-	= छुटे हुए
मृगाङ्क-	= मृग है चिह्न जिस का (चन्द्रमा)	रुजो	= रोग वाले (नीरोग) (संसार रूपी जन्म मरण रोग से मुक्त)
सदृशच्छायां	= समान (निर्मल) शोभा वाली	भवन्ति	= हो जाते है
		विपदः	= विपत्तियां
मनोहारिणीं	= मन को हरने वाली,	तान्	= उन भक्तों को
		दूरतः	= दूर
पाण्डु-	= श्वेत रंग के	प्रोज्झन्ति	= छोड देती हैं ॥ (वे विपत्तियों से छुटकारा पाते हैं)
उत्फुल्ल-	= खिले हुए		
सरोरुह-	= कमल के		
आसनगतां	= आसन पर ठहरी हुई,		
स्निग्ध-	= तेल से भरे		
प्रदीप-	= दिये की		
छविम्	दीप्ति वाली,		

(मृग का चिह्न)
(की तरह निर्मल शोभा से)

Mpr

P. T. O

१. प्रमेय रूप चन्द्रमा वेद्यसमूह में व्यापक है

२. मृग, चंचल तथा सुन्दर (स्पन्दात्मक तथा आनन्द दायक)

३ निर्मल कमल = संकोच विकास स्वभाव, अहंता इदन्तामय

४. अटल दीप्ति = अविनाशी चैतन्य स्वरूप

५. अमृत वर्षिणी अर्थात मुक्ति देने वाली।

पूर्णेन्दोः शकलैरिवातिबहलैः पीयूषपूरैरिव
क्षीराब्धेर्लहरीभरैरिव सुधापङ्कस्य पिण्डैरिव।
प्रालेयैरिव निर्मितं तव वपुर्ध्यायन्ति ये श्रद्धया
चित्तान्तर्निहतार्तितापविपदस्ते सम्पदं बिभ्रति ॥ ८॥

पदच्छेदः- पूर्ण इन्दोः शकलैः इव अति बहलैः पीयूष पूरैः इव
क्षीर अब्धेः लहरी भरैः इव सुधापङ्कस्य पिण्डैः इव।
प्रालेयैः इव निर्मितं तव वपुः ध्यायन्ति ये श्रद्धया
चित्त अन्तर् निहत आर्ति ताप विपदः ते सम्पदं बिभ्रति ॥ ८॥

पूर्ण-	= पूर्ण	ये	= जो भक्त
इन्दोः	= चन्द्रमा के	श्रद्धया	= श्रद्धा से
शकलैः	= गोल आकार से	ध्यायन्ति	= ध्यान करते हैं
इव	= जैसा	चित्त	= मन के
(निर्मितं)	= (बना हुआ)	अन्तर	= बीच
अति	= बहुत ही	नि+हत-	= पूर्णतया हरे हुए
बहुलैः	= बढ़े हुए	आर्ति-	= दीनता,
पियूष-	= अमृत के	ताप-	= दुख (तथा)
पूरैः	= प्रवाहों से	विपदः	= विपदा (वाले)
इव	= जैसा	ते	= वे भक्त
(निर्मितं)	= (बना हुआ)	सम्पदं	= (लौकिक तथा पारमार्थिक) सम्पत्तियों को
सुधा-	= अमृत के		
पङ्कस्य	= (गाढ़े) गारे के	बिभ्रति	= धारण करते हैं ॥
पिंडैः	= गोलों से	(उन भक्तों के मन के दुख और क्लेश दूर हो जाते हैं)	
इव	= जैसा		
(निर्मितं)	= (बना हुआ)		
प्रालेयैः	= बर्फ से		
इव	= जैसा		
निर्मितं	= बना हुआ (ऐसे ऐसे)		
तव	= तुम्हारे		
वपुः	= स्वरूप का		

P.T.O.

१. पूर्ण चन्द्रमा जैसा = अमृत का आगार, दोनों [(अहं, इदं)] अभिन्न (चित आनन्द ~~आनन्द~~)

२. अमृत के प्रवाह = चन्द्रमा से निकले हुए। (भेद का आरम्भ)
(इच्छा ~~शक्ति~~; या स्वातंत्र्य शक्ति)

३. तरंगों का समूह = भेद प्रकट। (ज्ञान शक्ति का स्फार)

४. [अमृत के गारे] ~~बर्फ~~ के गोले = अमृत अप्रकट, चित रूप का संकोच
और जगत ~~अव्यक्त~~ भेद मय
(क्रिया शक्ति का स्फार)

५ बर्फ़ से बना हुआ, = ~~चित रस आप्यायकता~~ (अत्यंत संकोच; माया शक्ति)
चित रस आप्यायनता

ये संस्मरन्ति तरलां सहसोल्लसन्तीं
त्वां ग्रन्थि पञ्चकभिदं तरुणार्क शोणाम्
रागार्णवे बहलरागिणि मज्जयन्तीं
कृत्स्नं जगद्दधति चेतसि तान्मृगाक्ष्य : ॥ ९॥

पदच्छेदः- ये संस्मरन्ति तरलां सहसा उल्लसन्तीं
त्वां ग्रन्थि पञ्चकभिदं तरुण अर्क शोणाम्।
राग अर्णवे बहलरागिणि मज्जयन्तीं
कृत्स्नं जगत् दधति चेतसि तान् मृग अक्ष्य॥ ९॥

ये = जो (भक्त)
तरलां = चंचल रूपवाली (संकोच विकास मय)
सहसा = इच्छा मात्र से ही
उल्लसन्तीं = विकसित रूप वाली
पंचक- = पांच
ग्रंथि* = गांठ (आवरण)
भिदं = हटाने वाली
तरुण + = छोटे (प्रातः काल के)
अर्क = सूर्य (जैसे)
शोणां = रक्तवर्ण (वाली)
त्वां = तुम्हें
कृत्स्नं = सारे
जगत = जगत को
बहल-रागिणि = { राग तत्त्व से भरे
राग-अर्णवे = { राग रूपी सागर मे
मज्जयन्तीं = डुबाते हुए (तुम्हारे स्वरूप का)
संस्मरन्ति = बार बार स्मरण से विमर्श करते हैं

मृगाक्ष्यः = मृग की जैसी सुन्दर नेत्रों वाली (आनन्द दायक इच्छा से प्राप्त करने योग्य दिव्य शक्तियाँ)
तान् = उन भक्तों को
चेतसि = अपने मन में
दधति = धारण करती हैं। (उस भक्त पर मोहित होकर उसके वश हो जाती हैं)

* पांच ग्रंथियां = चैतन्य स्वरूप को छिपाने वाली पांच शक्तियाँ अर्थात कला, विद्या, राग, काल और नियति

\+ ज्ञान शक्ति रूप प्रातः काल का सूर्य अति उष्ण न होने के कारण सुखदायक।

लाक्षारसस्नपित पङ्कज तन्तुतन्वी-

मऽन्तः स्मरत्यऽनुदिनं भवतीं भवानि।

यस्त्वं स्मर प्रतिममऽ प्रतिम स्वरूपा

नेत्रोत्पलैर्मृगदृशो भृशमऽर्चयन्ति ॥१०॥

पदच्छेदः- लाक्षारसस्नपित पङ्कज तन्तु तन्वीम्

अन्तः स्मरति अनुदिनं भवतीं भवानि!

यः तं स्मरप्रतिमं अप्रतिम स्वरूपाः

नेत्र उत्पलैः मृगदृशः भृशम् अर्चयन्ति॥१०॥

भवानि!	= हे देवी!		नेत्र + उत्पलैः	= (अपने) नेत्र कमलों से
यः	= जो भक्त		भृशम्	= ~~प्रीति~~ अत्यधिक चाव से
भवतीं	= आपको		अर्चयन्ति	= पूजती है॥
लक्षारस- स्नपति-	= { लाख के रस में घुले हुए			
पंकज-	= कमलों के			
तन्तुतन्वीं	= सूक्ष्म तार जैसे (स्वरूप का)			
अन्तः	= सुषम्ना धाम में			
अनुदिनं	= प्रति दिन (निरन्तर)			
स्मरति,	= स्मरण करता है			
तं	= उस भक्त को			
स्मर-	= कामदेव के			
प्रतिमम्	= समान (जैसे)			
अप्रतिम-	= उस पद की उपमा रहित			
स्वरूपाः	= स्वरूप वाली			
मृगदृशः	= मृग जैसी नेत्रों वाली (सुन्दर दिव्य शक्तियाँ)			

स्तुमस्त्वां वाचमऽव्यक्तां
हिमकुन्देन्दु रोचिषम् ।
कदम्बमालां बिभ्राणा-
माऽऽपाद तललम्बिनीम् ॥११॥

पदच्छेदः - स्तुमः त्वां वाचम् अव्यक्तां
हिम कुन्द इन्दु रोचिषम्।
कदम्बमालां बिभ्राणाम्
आपादतल लम्बिनीम् ॥११॥

~~(हे देवी हम तुमको)~~

त्वां = ~~तुम्हें~~ तुम

1 हिम - = बर्फ,
2 कुन्द - = कुन्द पुष्प (और)
3 इन्दु - = चन्द्रमा की जैसी
रोचिषम् = तेजवाली, (तथा)

आपादतल - = चरणों के तले तक
लम्बिनीम् = लटकती हुई
कदम्ब - कदम्ब पुष्पों की
मालां माला को
बिभ्राणाम् धारण करने वाली

अव्यक्तां = अप्रकट
वाचम् = वाणी
(परा रूप) की

स्तुमः (हम) स्तुति करते हैं

---

1 हिम - बर्फ का एक ही अर्थात् छिद्र रहित निर्मल तरलता - पश्यन्ती वाणी।
2 कुन्द पुष्प - संकुचित और एक दूसरे से भिन्न - मध्यमा वाणी
3 इन्दु - चन्द्रमा - वेदय समूह - वैखरी वाणी।

मूर्ध्नीन्दोः सितपङ्कजासनगतां प्रालेयपाण्डुत्विषं
वर्षन्तीममृतं सरोरुहभुवो वक्त्रेऽपि रन्ध्रेऽपि च।
अच्छिन्ना च मनोहरा च ललिता चाति प्रसन्नाऽपि च
त्वामेव स्मरतां स्मरारिदयिते! वाक् सर्वतो वल्गति ॥१२॥

पदच्छेदः- मूर्ध्नि इन्दोः सितपङ्कजआसनगतां प्रालेयपाण्डुत्विषं
वर्षन्तीम् अमृतं सरोरुहभुवः वक्त्रे अपि रन्ध्रे अपि च।
अच्छिन्ना च मनोहरा च ललिता च अति प्रसन्ना अपि च
त्वाम् एव स्मरतां स्मर अरि दयिते! वाक् सर्वतो वल्गति ॥१२॥

स्मरारि-दयिते! = हे शंकर की शक्ति!
मूर्ध्नि = सिर पर
इन्दोः = चन्द्रमा ~~के (जैसे)~~ प्रकाशमान
सित- = श्वेत तथा निर्मल, आनन्ददायक
पंकज- = कमल के
आसनगतां = आसन पर स्थित,
प्रालेय- = बर्फ जैसी
पाण्डु- = सफेद चमकीली,
त्विषं = दीप्ति वाले,
अमृतं = अमृत
~~की~~ वर्षन्तीं = बरसाने वाले

~~वक्त्रेऽपि = मूलाधार पर भी (तथा)~~
~~रन्ध्रेऽपि = ब्रह्मरन्ध्र पर भी~~

~~सरोरुहे- = कमल के~~
~~भुवः = पत्तों के पर~~
~~अमृतं = अमृत~~
~~वर्षन्तीं = बरसाने वाली~~

~~we given can look~~

त्वाम् एव = तुम्हें ही (तुम्हारे ऐसे स्वरूप का)
स्मरतां = स्मरण करने वालों को
अच्छिन्ना = छेद रहित (निरन्तर)
च = तथा
मनोहरा = मन को हरने वाली
च = तथा
ललिता = सुन्दर भी
च अपि = और
अति = बहुत ही
प्रसन्ना = निर्मल
अपि = भी (ऐसी)
वाक् = वाणी
सर्वतो = सब ओर से
वल्गति = प्रकट होती है (विकास में आती है।

ददातीष्टान्भोगान्क्षपयति रिपोन्हन्ति विपदो
दहत्याधीन्व्याधीञ्छमयति सुखानि प्रतनुते।
हठादन्तर्दुःखं दलयति पिनष्टीष्टविरहं
सकृद्ध्याता देवी किमिव निरवद्यं न कुरुते॥२३॥

पदच्छेदः- ददाति इष्टान् भोगान् क्षपयति रिपून् हन्ति विपदः
दहति आधीन् व्याधीन् शमयति सुखानि प्रतनुते।
हठात् अंतर्दुःखं दलयति पिनष्टि इष्टविरहम्
सकृत् ध्याता देवी किम् * इव निः अवद्यं न कुरुते॥२३॥

सकृत्	= एक ही बार (निरन्तर प्रवाह रूप)	दुःखं	= दुखों को
		हठात्	= ज़ोर से
ध्याता	= ध्यान की हुई	दलयति	= नष्ट करती है,
देवी	= देवी	इष्ट-	= प्यारों के
इष्टान्	= चाहे हुए	विरहं	= वियोग को
भोगान्	= भोगों को	पिनष्टि	= पीसती है (प्यारों से मिलाप कराती है)।
ददाति	= देती है,		
रिपून्	= शत्रुओं को	किम् इव	= वह कौन सी बात है (जिसको कि देवी)
क्षपयति	= नाश करती है,		
विपदः	= आपत्तियों को	निरवद्यं	= दोष रहित प्रकार से
हन्ति	= हटाती है,	न कुरुते	= (सिद्ध) नहीं करती है?
आधीन्	= मन के रोगों को		
दहति	= जलाती है,		
व्याधीन्	= शरीर के रोगों को		
शमयति	= शांत करती है,		
सुखानि	= सुखों को		
प्रतनुते	= विस्तारती है,		
अन्तः	= अन्तःकरणों के		

यस्त्वां ध्यायति वेत्ति विन्दति जपत्यालोकते चिन्तय-
त्यन्वेति प्रतिपद्यते कलयति स्तौत्याश्रयत्यर्चति।
यश्च त्र्यम्बकवल्लभे! तव गुणानाऽऽकर्णयत्यादरा-
त्तस्य श्रीर्न गृहादपैति विजयस्तस्याग्रतो धावति॥१४॥

पदच्छेदः- यः त्वां ध्यायति वेत्ति विन्दति जपति आलोकते चिन्तयति
अन्वेति प्रतिपद्यते कलयति स्तौति आश्रयति अर्चति।
यः च त्र्यम्बकवल्लभे! तव गुणान् आकर्णयति आदरात्
~~तस्य~~ तस्य श्रीः न गृहात् अपैति विजयः तस्य अग्रतः धावति॥१४॥

त्र्यम्बकवल्लभे! = हे ~~देवी~~ शिव की प्यारी ~~है~~ देवी

यः	= जो कोई	तव	= तुम्हारे
त्वां	= तुम्हें	गुणान्	= गुणों को
ध्यायति	= ध्यान करता है,	आदरात्	= आदर के साथ
वेत्ति	= जानता है,	आकर्णयति	=(समाहित होकर) सुनता है
विन्दति	= प्राप्त करता है,		
जपति	= जप करता है,	तस्य	= उस पुरुष के
आलोकते	= देखता है,	गृहात्	= घर से
चिन्तयति	= चिन्तन करता है,	श्रीः	= भोग और मोक्ष रूप लक्ष्मी
अन्वेति	= पीछे चलता है,		
प्रतिपद्यते	= शरण में आता है,	न	= नहीं
कलयति	= विमर्श करता है,	अपैति	= दूर जाती है (उसके वश में रहती है) ~~(तथा)~~
स्तौति	= स्तुति करता है		(तथा)
आश्रयति	= आसरा लेता है		
अर्चति	= पूजता है	विजयः	= (भेद पर) विजय
त्र्यम्बक-वल्लभे!	= शिव की प्यारी (देवी)	तस्य	= उसके
		अग्रतो	= आगे आगे
~~[illegible]~~	~~[illegible]~~	धावति	= दौडती है।
~~[illegible]~~	~~तुम्हारे~~		
च	= और		
यः	= जो		

वह सब दुःखों और आत्मा के ~~आवरणों~~ आवरण रूप मोह को जीत कर आत्मलाभ प्राप्त करता है॥

किं किं दुःखं दनुजदलिनि! क्षीयते न स्मृतायां
का का कीर्तिः कुलकमलिनि! ख्याप्यते न स्तुतायाम्।
का का सिद्धिः सुरवरनुते! प्राप्यते नार्चितायां
कं कं योगं त्वयि न चिनुते चित्तमालम्बितायाम्॥१५॥

पदच्छेदः- किं किं दुःखं दनुजदलिनि! क्षीयते न स्मृतायाम्
का का कीर्तिः कुलकमलिनि! ख्याप्यते न स्तुतायाम्।
का का सिद्धिः सुरवरनुते! प्राप्यते न अर्चितायाम्
कं कं योगं त्वयि न चिनुते चित्तम् आलम्बितायाम्॥१५॥

दनुजदलिनि! = हे राक्षसों की संहारकारिणी (देवी)!
किं किं = कौन२ सा
दुःखं = (ऐसा) दुख है
स्मृतायां = (जो तुम्हारे) स्मरण करने पर
न क्षीयते = नष्ट नहीं होता है?
कुलकमलिनि! = हे निज कुल रूपी कमल को खिलाने वाली (देवी)!
का का = (वह) कौन२ सी
कीर्तिः = कीर्ति है
स्तुतायाम् = (जो तुम्हारी) स्तुति करने पर
(न) ख्याप्यति = सिद्ध नहीं होती है?
सुरवरनुते! = हे श्रेष्ट देवताओं से नमस्कार की गई (देवी)!
का का = (वह) कौन२ सी
सिद्धिः = सिद्धि है
अर्चितायां = (जो तुम्हारे) पूजा करने पर
न प्राप्यते = प्राप्त नहीं होती है?
कं कं = (वह) कौन२ सा
योगं = योग है
त्वयि = (जो) तुम में
चित्तम् = मन
आलम्बितायाम् = लगाने पर
न चिनुते = जाना नहीं जाता है?

ये देवि ! दुर्धरकृतान्त मुखान्तरस्था
ये कालि ! कालघन पाश नितान्त बद्धाः ।
ये चण्डि ! चण्डगुरु कल्मष सिन्धु मग्ना-
स्तान्पासि मोचयसि तारयसि स्मृतैव ॥ १६॥

पदच्छेदः- ये देवि! दुर्धर कृतान्त मुखअन्तरस्थाः
ये कालि! कालघनपाशनितान्त बद्धाः।
ये चण्डि! चण्ड गुरु कल्मष सिन्धुमग्नाः
तान् पासि मोचयसि तारयसि स्मृता एव ॥ १६॥

देवि! = हे (चमकने वाली स्वप्रकाश) देवी!
ये = जो
दुर्धर- = धारण करने के लिए कठिन (भयानक)
कृतान्त- = मृत्यु के
1 मुखान्तरस्था = मुख में पडे हुए हों,
कालि! = हे (काल को जीतने वाली!
ये
काल- = काल शक्ति की
घनपाश- = घनी फांसियों से
2 { नितान्त- = ज़ोर से
बद्धाः = (जो) बांधे गये हैं,
चण्डि! = हे तेजोमय भयानक रूप धारण करने वाली (देवी)!
ये = (और) जो
चण्ड- = कठिन (और)
गुरुकल्मष = भारी पापों के
3 { सिन्धु- = समुद्र में
मग्नाः = डूबे हों,
तान् = ऐसे सभी (आर्त भक्तों को)
स्मृता एव = (उन के द्वारा) स्मरण किये जाने पर (क्रमशः)
1 पासि = बचाती है,
2 मोचयसि = छुटकारा दिलाती है
3 तारयसि = पार लंघाती है

लक्ष्मी वशीकरण चूर्ण सहोदराणि
त्वत्पाद पङ्कज रजांसि चिरं जयन्ति।
यानि प्रणामम्मिलितानि नृणां ललाटे
लुम्पंति दैवलिखितानि दुरक्षराणि ॥२७॥

पदच्छेद:- लक्ष्मीवशीकरण चूर्ण सह उदराणि
त्वत् पादपङ्कज रजांसि चिरं जयन्ति।
यानि प्रणाम मिलितानि नृणां ललाटे
लुम्पन्ति दैव लिखितानि दुर्-अक्षराणि ॥२७॥

लक्ष्मी- =(भोग) लक्ष्मी को
वशीकरण- = वश करने के
चूर्ण- = औषधि के
सहोदराणि = सगे भाई अर्थात समान शक्ति रखने वाले
त्वत् - = तुम्हारे
पादपंकज- = चरणकमलों की
रजांसि = धूलि के कण
चिरं = अनन्त काल तक
जयन्ति = जय शील रहते हैं
यानि = जो (धूलि के कण)
नृणां =(प्रणाम करने वाले) मनुष्यों के
ललाटे = माथे पर
प्रणाम- = प्रणाम करने से
मिलितानि = ~~(माथे पर)~~ लगे हुए
दैव- = प्रारब्ध से
लिखितानि = लिखे हुए
दुर्- = बुरे
अक्षराणि = अक्षरों को
लुम्पन्ति = मिटा देते हैं॥
अर्थात सभी आपत्तियों से छुटकारा देते हैं॥

रे मूढाः! किमयं वृथैव तपसा कायः परिक्लिश्यते
यज्ञैर्वा बहुदक्षिणैः किमितरे रिक्ती क्रियन्ते गृहाः।
भक्तिश्चेदऽविनाशिनी भगवती पादद्वयी सेव्यता-
मुन्निद्राम्बुरुहातपत्र सुभगा लक्ष्मीः पुरो धावति ॥१८॥

पदच्छेदः- रे मूढाः! किं अयं वृथा एव तपसा कायः परिक्लिष्यते?
यज्ञैः वा बहुदक्षिणैः किं इतरे रिक्ती क्रियन्ते गृहाः?
भक्तिः चेत् अविनाशिनी भगवती पादद्वयी सेव्यताम्
उन्निद्र अम्बुरुह आतपत्र सुभगा लक्ष्मीः पुरः धावति॥१८॥

कृष्ठ

रे मूढाः!	= अरे मोह में डूबे हुए सांसारिक पुरुषो!	भक्तिः =	भक्ति है (तो)
		अविनाशिनी =	तीन काल में नित्य
किं	= क्यों	भगवती- =	देवी के
तपसा	=(ज्ञानरहित) तपस्या द्वारा	पादद्वयी =	दो चरणों की
		सेव्यताम् =	सेवा कीजिये॥
अयं	= यह (अपना)	उन्निद्र- =	(तो) खिले हुए
कायः	= शरीर	अम्बुरुह- =	कमल के
वृथा एव	= व्यर्थ ही	आतपत्र- =	छत्र से
परिक्लिष्यते?	=(तुम से) कष्ट दिया जाता है?*	सुभगा =	शोभायमान
		लक्ष्मी =	लक्ष्मी
वा	= अथवा	पुरो =	तुम्हारे आगे
बहु दक्षिणैः	= बड़ी दक्षिणा वाले	धावति =	दौड़ेगी॥
यज्ञैः	= यज्ञों से		
इतरे	= कुछ पुरुष		
गृहाः	= (अपने) घरों को		
रिक्ती (किं)	= खाली (क्यों)		
क्रियन्ते	= कर देते हैं?		
चेद्	= यदि (तुम में)		
(अविनाशिनी)	=(अटल)		

x
२

---

* ज्ञान प्राप्त करने के बिना तपस्या और चान्द्रायण व्रत इत्यादि कष्ट आत्मज्ञान नहीं दे सकते हैं॥

याचे न कंचन न कंचन वञ्चयामि
सेवे न कंचन निरस्तसमस्तदैन्यः।
श्लक्ष्णं वसे मधुरमद्मि भजे वरस्त्री-
र्देवी हृदि स्फुरति मे कुलकामधेनुः॥१६॥

पदच्छेदः- याचे न कंचन न कंचन वञ्चयामि
सेवे न कंचन निरस्तसमस्तदैन्यः।
श्लक्ष्णं वसे मधुरं अद्मि भजे वरस्त्रीः
देवी हृदि स्फुरति मे कुलकामधेनुः॥१६॥

निरस्त- = हटी हुई
समस्त- = सभी
दैन्यः = दीनताओंवाला
(मैं भक्त)
कंचन = किसी से भी [1]
न याचे = कुछ नहीं मांगता हूँ *
कंचन = किसी कोभी
न वंचयामि = कपट से नहीं
ठगता हूँ, *2
कंचन = किसीकीभी
न सेवे = सेवा नहींकरताहूँ
श्लक्ष्णं = सुन्दर (बारीक) [3]
वसे = वस्त्र धारण करताहूँ
मधुरम् = स्वादिष्ट
अद्मि = भोग भोगता हूँ
वरस्त्रीः = उत्तम चित्त शक्ति का
भजे = विमर्श करता हूँ
(क्योंकि)

कुलकामधेनुः = सभीअभिलाषाओं
को पूर्ण करने वाली
देवी = तेजस्वी देवी
मे = मेरे
हृदि = हृदय में
स्फुरति = विकसित है॥

---

१. मैं स्वतंत्र और परिपूर्ण हूँ।
२. मेरा अंतः करण शुद्ध है।

३. मैं चित्स्वरूप हूँ

शब्दब्रह्ममयि! स्वच्छे देवि त्रिपुरसुन्दरि।
यथाशक्ति जपं पूजां गृहाण परमेश्वरि ॥ २०॥

पदच्छेदः- शब्दब्रह्ममयि! स्वच्छे! देवि! त्रिपुरसुन्दरि।
यथाशक्ति जपं पूजां गृहाण परमेश्वरि!॥ २०॥

~~शब्दब्रह्म~~

शब्दब्रह्ममय

स्वच्छे! = हे निर्मल चित्स्वरूप
देवी! = हे सृष्टि-स्थिति-संहार
रूप क्रीडा करने वाली!
त्रिपुरसुन्दरि! हे तीनों शरीरों में
व्यापक! ~~होने वाली~~!
परमेश्वरि! हे परमेश्वर की
स्वातंत्र्य शक्ति!,
यथा शक्ति = जैसी वैसी थोडी
मेरी शक्ति है (वैसे मेरे)
जपं = जप (और)
पूजां = पूजा को
गृहाण = स्वीकार कर।

नन्दन्तु साधकाः सर्वे विनश्यन्तु विदूषकाः।
अवस्था शाम्भवी मेऽस्तु प्रसन्नोऽस्तु गुरुः सदा॥२१॥

पदच्छेदः- नन्दन्तु साधकाः सर्वे विनश्यन्तु विदूषकाः।
अवस्था शाम्भवी मे अस्तु प्रसन्नः अस्तु गुरुः सदा॥२१॥

सर्वे	= सभी	अवस्था	= अवस्था
साधकाः	= मोक्ष सिद्धि के अभिलाषी	अस्तु	= रहे,
		गुरुः	= मेरे गुरुदेव
नन्दन्तु	= आनन्द प्राप्त करें,	सदा	= सदा व सर्वदा
विदूषकाः	= दोष सहित पापीजन	प्रसन्नः	= मुझ पर अनुग्रह करने वाले
विनश्यन्तु	= नष्ट हो जायें;[१]		
मे	= मुझे	अस्तु	= रहें।
शाम्भवी	= शाम्भव (अभेदमय)		

---

१. उनकी पाप करने की प्रवृत्ति शुद्ध होकर वे भी दोष रहित हो जायें।

दर्शनात्पाप शामनी जपान्मृत्युविनाशिनी।
पूजिता दुःख दौर्भाग्य हरा त्रिपुरसुन्दरी ॥२२॥

पदच्छेदः- दर्शनात् पापशामनी जपात् मृत्युविनाशिनी।
पूजिता दुःख दौर्भाग्यहरा त्रिपुरसुन्दरी ॥२२॥

त्रिपुरसुन्दरी = देवी त्रिपुरा
दर्शनात् = दर्शन से
पापशामनी = पापों को नाश करती है,
जपात् = जप से
मृत्युविनाशिनी = मृत्यु का ~~[illegible]~~ भय दूर करने वाली ~~है~~ है,
पूजिता = पूजा की गई (देवी)
~~(अर्थात् पूजा करने पर देवी)~~ (अर्थात जब भक्त उसकी पूजा करते हैं)

दुःख = दुख (और)
दौर्भाग्य - = ~~[illegible]~~ दुर्भाग्यों को
हरा = हटाने वाली (बनती है)।

नमामि यामिनी नाथ लेखालङ्कृत कुन्तलाम् ।
भवानीं भवसन्ताप निर्वापण सुधा नदीम् ॥२३॥

पदच्छेदः- नमामि यामिनीनाथ लेखा अलङ्कृत कुन्तलाम्।
भवानीं भवसन्ताप निर्वापण सुधानदीम्॥२३॥

यामिनीनाथ- = चन्द्रमा की
लेखा- = कला से
अलंकृत- = शोभित
कुन्तलाम् = केशों वाली,
(देवी)
भव- = संसार के
संताप- = दुखों को
निर्वापण- = हटाने के लिए
सुधानदीम् = अमृतनदी रूप

भवानीम् = देवी को
नमामि = मैं प्रणाम करता हूँ

why not drop?

मन्त्रहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं च यद्गतम्।
त्वया तत्क्षम्यतां देवि! कृपया परमेश्वरि ॥२४॥

पदच्छेदः- मन्त्रहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं च यत गतम।
त्वया तत क्षम्यतां देवि! कृपया परमेश्वरि! ॥२४॥

मंत्र हीनं	= मंत्र रहित,	देवि!	= हे देवी।
क्रिया हीनं	= क्रिया रहित	परमेश्वरि!	= परमेश्वर की शक्ति
~~विधिहीनं~~	=	त्वया	= आप ~~(ने)~~
च	= और	तत	= उस सब कुछ ~~को~~ के लिए
विधिहीनं	= विधिरहित		
यद	= जो कुछ	कृपया	= कृपा करके।
गतम	= मुझ से हुआ	क्षम्यताम	= क्षमा करें।

इति पञ्चस्तव्यां घटस्तवस्तृतीयः॥

22 shlokas 4th Stawan

ॐ

अथ पञ्चस्तव्यामम्बस्तवश्चतुर्थः ।

ॐ यामाऽऽमनन्ति मुनयः प्रकृतिं पुराणीं
विद्येति यां श्रुति रहस्य विदो वदन्ति ।
तामर्ध पल्लवितशङ्कर रूप मुद्रां
देवीमनन्यशरणः शरणं प्रपद्ये ॥१॥

पदच्छेदः -

याम् आमनन्ति मुनयः प्रकृतिं पुराणीम्
विद्या इति यां श्रुतिरहस्य विदः वदन्ति।
तां अर्धपल्लवित शङ्कररूप मुद्रां
देवीम् अनन्यशरणः शरणं प्रपद्ये ॥१॥

याम् = जिसको
मुनयः = ऋषि मुनि
पुराणीम् = अनादि काल से सिद्ध
प्रकृतिम् = प्रकृति
आमनन्ति = कहते है,
याम् = जिस को
श्रुति- = वेदों और शास्त्रों के
रहस्य- = सार को
विदो = जानने वाले (ज्ञानी पुरुष)
विद्या = शुद्ध विद्या के
इति = नाम से
वदन्ति = पुकारते हैं,

ताम् = उसी
{ अर्ध- [1] पल्लवित- शंकररूप- मुद्रां } आधे स्वरूप के अर्पण करने से विकसित हो कर शंकर के स्वरूप को मुद्रित करने वाली
देवीं = देवी को
{ अनन्य- शरणः } = (मैं भक्त) जिसका (देवी के बिना) दूसरा कोई सहारा नहीं है
शरणं = शरण
प्रपद्ये = होता हूँ ॥

---

[1] जिसने अपना आधा स्वरूप शिव को अर्पण करके (उसे चैतन्य रूप बना कर) शक्तिमान बनाया है, और उसके स्वरूप में अपनी शक्ति की मुद्रा स्थापित की है।

अम्ब! स्तवेषु तव तावदऽकर्तृकाणि
कुण्ठीभवन्ति वचसामऽपि गुम्फनानि।
डिम्बस्य मे स्तुतिरसावऽसमञ्जसाऽपि
वात्सल्य निघ्न हृदयां भवतीं धिनोति॥ २॥

पदच्छेदः-

अम्ब! स्तवेषु तव तावत् अकर्तृकाणि
कुण्ठी भवन्ति वचसाम् अपि गुम्फनानि।
डिम्बस्य मे स्तुतिः असौ असमञ्जसा अपि
वात्सल्य निघ्न हृदयां भवतीं धिनोति॥ २॥

अम्ब! = हे माता!
तव = तुम्हारी
स्तवेषु = स्तुति करने में
तावत् तो
अकर्तृकाणि = (वेदों की) जिनका कोई कर्ता कोई (प्राणी) नहीं है
वचसां = वाणियों के
गुम्फनानि = समूह
तावत् =
कुण्ठी = कुण्ठित
भवन्ति = हो जाते हैं

भवन्ति = हो जाती हैं (तो भी)
मे = मुझ
डिम्बस्य = मूर्ख की
असौ = यह
स्तुतिः = स्तुति
असमञ्जसापि = (यद्यपि) अयुक्त भी है
वात्सल्य = प्रेम से
निघ्न = कोमल
हृदयां = हृदय वाली

वात्सल्यनिघ्न- स्नेह भरे

वचसां वेदों की
गुम्फनानि सुन्दर रचनायें (वाक्य)
अकर्तृकाणि जिनका (परमेश्वर के बिना) कोई कर्ता नहीं है,
कुण्ठी कुण्ठित

निघ्न = कोमल
हृदयां = हृदय वाली
भवतीं = आप (माता) को
धिनोति = प्रसन्न करती है।

व्योमेति बिन्दुरिति नाद इतीन्दुलेखा-
रूपेति वाग्भवतनूरिति मातृकेति ।
निःष्यन्दमान सुखबोध सुधा स्वरूपा
विद्योतसे मनसि भाग्यवतां जनानाम् ॥३॥

पदच्छेदः -

व्योम इति बिन्दुः इति नादः इति इन्दुलेखा-
रूपा इति वाक्भवतनूः इति मातृका इति।
निःष्यन्दमान सुख बोध सुधा स्वरूपा
विद्योतसे मनसि भाग्यवतां जनानाम् ॥ ३॥

व्योम इति = चिदाकाश,
बिन्दुः इति = ज्ञान,
नादः इति = विज्ञान,
इन्दुलेखा-रूपा इति = चन्द्रमा की कला-रूप,
वाक्- = वाणियों के
भवतनूः इति = उत्पत्ति स्थान रूप
मातृका इति = ~~मात्र मात्री~~, माता रूप (और)
निःष्यन्दमान- = निकलते हुए
सुख- = आनन्द, (और)
बोध- = ज्ञान रूप
सुधा- = अमृत के
स्वरूपा = स्वरूप वाली

(हे देवी! आप)

भाग्यवतां = भाग्यवान्

जनानां = (भक्त) जनों के
मनसि = मन में
विद्योतसे = विकसित (प्रकट) होती हो।

आविर्भवत्पुलक सन्ततिभिः शरीरै-
र्निःष्यन्दमान सलिलैर्नयनैश्च नित्यम् ।
वाग्भिश्च गद्गदपदाभिरुपासते ये
पादौ तवाम्ब ! हृदयेषु त एव धन्याः ।। ४ ।। भुवनेषु

पदच्छेदः-

आविर्भवत् पुलकसन्ततिभिः शरीरैः
निःष्यन्दमान सलिलैः नयनैः च नित्यम्।
वाग्भिः च गद्गदपदाभिः उपासते ये
पादौ तव अम्ब! भुवनेषु ते एव धन्याः ।।४।।
हृदयेषु

अम्ब! = हे माता!
आविर्भवत्- = प्रकट बने हुए
पुलक- = रोमांचों की
सन्ततिभिः = पंक्तियों से युक्त
शरीरैः = शरीरों से,
निःष्यन्दमान- = बहते हुए
सलिलैः = जल से युक्त (अश्रुधारा से भरे)
नयनैः = नेत्रों से,
च = और
गद्गदपदाभिः = गद्गद शब्दों वाली (हिचकी बन्धे हुए)
वाग्भिः = वाणियों से
ये = जो (भक्तवर)
तव = तुम्हारे

पादौ = चरणों को
नित्यम् = निरन्तर
~~हृदयेषु~~
हृदयेषु = अपने हृदयों में
उपासते = पूजते हैं (मन में धारण करते हैं)
त एव = वे ही (भक्त)
धन्याः = श्लाघ्य हैं अर्थात् आप से एकता प्राप्त करने के अधिकारी बनते

वक्त्रं यदुद्यतमऽभिष्टुतये भवत्या-
स्तुभ्यं नमो यदपि देवि! शिरः करोति।
चेतश्च यत्त्वयि परायणमम्ब! तानि
कस्यापि कैरपि भवन्ति तपोविशेषैः ॥ ५॥

पदच्छेदः-

वक्त्रं यत् उद्यतम् अभिष्टुतये भवत्याः
तुभ्यम् नमः यत् अपि देवि! शिरः करोति।
चेतः च यत् त्वयि परायणम् अम्ब! तानि
कस्य अपि कैः अपि भवन्ति तपः विशेषैः॥ ५॥

देवि!	= हे देवी!	यत्	= जो
वक्त्रं	= (ऐसा) मुख	त्वयि	= आपमें (आपके विमर्श में)
यत्	= जो		
भवत्याः	= आपकी	परायणम्	= लीन है,
अभिष्टुतये	= बार बार स्तुति करने के लिए	अम्ब!	= हे माता!
		तानि	= यह (तीनों बातें)
		कस्यापि	= किसी ही विरले (भक्त) को
उद्यतम्	= उद्योग युक्त है,		
शिरः	= (ऐसा) सिर	कैरपि	= किन्हीं
अपि	= भी		
यत्	= जो	तपोविशेषैः	= उत्तम तपों (के बल) से
तुभ्यं	= आपको		
नमः	= नमस्कार	भवन्ति	= (प्राप्त) होती हैं।
करोति	करता है,		
चेतः च	= और (ऐसा) मन		

मूलालवाल कुहराढुदिता भवानि!
निर्भिद्य षट्सरसिजानि तडिल्लतेव।
भूयोऽपि तत्र विशसि ध्रुव मण्डलेन्दु-
निः ष्यन्द मान परमामृत तोय रूपा ॥ ६॥

पदच्छेदः-

मूलआलवाल कुहरात् उदिता भवानि!
निर्भिद्य षट् सरसिजानि तडित् लता इव।
भूयः अपि तत्र विशसि ध्रुवमण्डल इन्दु-
निःष्यन्दमान परम अमृत तोयरूपा॥ ६॥

भवानि!	= हे देवी	ध्रुवमंडलेन्दु-	निश्चल मण्डल वाले चन्द्रमा (अमा कला) से
मूलालवाल-कुहरात्	= मूलाधार के रन्ध्र से	निःष्यन्दमान-	प्रवाहरूप में निकलते हुए
उदिता	= उदय में आई हुई	परमामृत - तोयरूपा	उत्कृष्ट चित् अमृत के जलरूप
षट	= छः	तत्र	उसी मूलाधार में
सरसिजानि	= कमलों को	विशसि	प्रवेश करती हो॥
तडित लता	= बिजली की कडक		
इव	= की तरह		
निर्भिद्य	= फाड कर		
भूयः अपि	= फिर		

मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक छः स्थान अर्थात् नाभि, हृदय, कण्ठ, तालु, भ्रूमध्य तथा ब्रह्मरन्ध्र।

दग्धं यदा मदनमेकमऽनेकधा ते
मुग्धः कटाक्षविधिरङ्कुरयां चकार।
धत्ते तदाप्रभृति देवि! ललाट नेत्रं
सत्यं ह्रियेव मुकलीकृतमिन्दुमौलिः॥७॥

पदच्छेदः-

दग्धं यदा मदनम् एकम् अनेकधा ते
मुग्धः कटाक्ष विधिः अङ्कुरयां चकार।
धत्ते तदा प्रभृति देवि! ललाट नेत्रम्
सत्यं ह्रिया इव मुकुली कृतम् इन्दु मौलिः॥७॥

देवि!	= हे देवी!	इन्दु मौलिः	= शंकर
यदा	= जब	ललाट-	= माथे के
ते	= तुम्हारी	नेत्रं	= नेत्र को
मुग्धः	= मनोहर	सत्यं	= सचमुच ही
कटाक्षविधिः	= नेत्रों की दृष्टि		
एकम्	अकेले	ह्रिया	= लज्जा के मारे
दग्धं	= जले हुए	मुकलीकृतम्	= बन्द किये हुए
मदनम्	= कामदेव को	इव	जैसा
अंकुरयां-	= अंकुर-	धत्ते	= धारण करता है
चकार	= निकालने लगी		

अर्थात उसे पुनः
जीवित करने लगी

~~तदाप्रभृ~~ =
तदा प्रभृति = तब से

अज्ञातसम्भवमनाकलितान्ववायं
भिक्षुं कपालिनमवाससमद्वितीयम्।
पूर्वं करग्रहणमङ्गलतो भवत्याः
शम्भुं क एव बुबुधे गिरिराजकन्ये॥ ८॥

पदच्छेदः -

अज्ञातसम्भवम् अनाकलित अन्ववायं
भिक्षुं कपालिनम् अवाससम् अद्वितीयम्।
पूर्वं करग्रहणमङ्गलतः भवत्याः
शम्भुं कः एव बुबुधे गिरिराजकन्ये! ८॥

गिरिराजकन्ये!	= हे पार्वती!	भवत्याः	= आपके साथ
अज्ञात संभवम्	= जिसके माता पिता ही विदित नहीं,	करग्रहण -: पाणिग्रहण विवाह (रूप)	
		मंगलतो	= कल्याण से
		पूर्वं	= पहले
अनाकलित-अन्ववायं	= {जिसका कुल ही किसी को मालूम नहीं,	कः एव	= भला कौन
		बुबुधे	= जानता था?

अर्थात् कोई भी नहीं जानता था।

भिक्षुं = भिक्षा करने वाले,
कपालिनं = कपालधारी,
अवाससम् = नंगे (वस्त्रहीन) (तथा)
अद्वितीयम् = जिसके जैसा कोई दूसरा नहीं,
शम्भुं = (ऐसे) शंकर को

चर्माम्बरं च शवभस्म विलेपनं च
भिक्षाटनं च नटनं च परेत भूमौ।
वेताल संहति परिग्रहता च शम्भो:
शोभां बिभर्ति गिरिजे! तव साहचर्यात् ॥ ६॥

पदच्छेद: -

चर्म अम्बरं च शवभस्म विलेपनं च
भिक्षा अटनं च नटनं च परेत भूमौ।
वेताल संहति परिग्रहता च शम्भो:
शोभां बिभर्ति गिरिजे तव साहचर्यात् ॥ ६॥

शम्भो:	= शिवका	गिरिजे!	= हे पार्वती!
चर्माम्बरं	= मृगछाला इत्यादि ~~खालों के~~ वस्त्र पहनना,	तव	= तुम्हारे (उसके) (शिव के)
		साहचर्यात्	= साथ चलने से
शवभस्म-	= मुर्दों का भस्म	शोभां	= शोभा को
विलेपनं च	= शरीर पर मलना,	※ बिभर्ति	= धारण करती हैं।
भिक्षाटनम् च	= और भिक्षा के लिए घूमना,		
परेत भूमौ	= प्रेतों की भूमि में ~~घूमना~~,		
~~च~~ नटनं	= नाचना,		
~~च~~ च	= तथा		
वेताल संहिति-	= वेताल, ~~इत्यादि~~ भैरव इत्यादि ~~प्रेतों~~ के समूह का		
परिग्रहता	= कुटुम्ब रूप होना (यह उसकी सब बातें)		

※ शंकर का यह सब व्यवहार, अर्थात नंगा रहना, भस्म मलना, भिक्षा मांगना इत्यादि जो सांसारिक दृष्टि से निन्दित है, देवी के उसके साथ होने से उसके (शंकर के) प्रभाव को बढ़ाता है।

कल्पोपसंहरणकेलिषु पण्डितानि
चण्डानि खण्डपरशोरपि ताण्डवानि।
आलोकनेन तव कोमलितानि मात-
ना र्लास्यात्मना परिणमन्ति जगद्विभूत्यै ॥१०॥

पदच्छेदः -

कल्प उपसंहरण केलिषु पण्डितानि
चण्डानि खण्डपरशोः अपि ताण्डवानि।
आलोकनेन तव कोमलितानि मातः!
लास्यात्मना परिणमन्ति जगत् विभूत्यै ॥१०॥

मातः! = हे माता!
कल्प- = कल्प के
उपसंहरण- = संहार करनेकी
केलिषु = क्रीडाओं में
खण्डपरशोः = कुल्हाडा जिसका आयुध है (ऐसे शंकर के)
पण्डितानि = निपुण ~~[illegible]~~ (तथा)
चण्डानि = अति तीक्ष्ण
ताण्डवानि = ताण्डव नृत्य
अपि = भी
तव = तुम्हारी
~~आलोकनेन = दृष्टिमात्रसे~~
लास्यात्मना सृष्टिकारक नाचरूप
आलोकनेन दृष्टिमात्रसे

कोमलितानि = कोमल बनकर
जगत् = जगत के
विभूत्यै = ऐश्वर्य के लिए
~~लास्यात्मना = अनुग्रहरूप से~~
परिणमन्ति = परिणत होजाते हैं।

जन्तोर पश्चिमतनोः सति कर्मसाम्ये
निःशेषपाशपटलच्छिदुरा निमेषात् ।
कल्याणि! दैशिककटाक्ष समाश्रयेण
कारुण्यतो भवसि शाम्भव वेददीक्षा ॥ ११ ॥

पदच्छेदः -

जन्तोः अपश्चिमतनोः सति कर्मसाम्ये
निःशेष पाश पटल छिदुरा निमेषात्।
कल्याणि! दैशिक कटाक्ष सम् आश्रयेण
कारुण्यतः भवसि शाम्भव वेद दीक्षा ॥ ११ ॥

कल्याणि! = हे कल्याण-स्वरूपिणी!
अपश्चिमतनोः = ※ जीवन्मुक्त ~~बनने वाले~~ बनने वाले
जन्तोः = जीवधारी को
कर्मसाम्ये = (पुण्य और पाप) कर्मों की समता
सति = हो जाने पर
दैशिक- = सद्गुरु की
कटाक्ष- = अनुग्रह की दृष्टि का
समाश्रयेण = आश्रय लेने से
निमेषात् = क्षणमात्र में
निःशेष- = सभी
पाश- = पाशों के
पटल- = समूहों को
छिदुरा = काटने वाली
शाम्भव वेद- = शैव शास्त्रों की
दीक्षा = रहस्य उपदेश करने वाली
भवसि = (तुम) बनती हो।

※ जिसे इस शरीर के पश्चात् कोई दूसरा शरीर धारण नहीं करना है ~~अर्थात्~~

मुक्ता विभूषणवती नवविद्रुमाभा
यच्चेतसि स्फुरसि तारकितेव सन्ध्या।
एकः स एव भुवनत्रय सुन्दरीणां
कन्दर्पतां व्रजति पञ्चशरीं विनापि॥१२॥

पदच्छेदः -

मुक्ता विभूषणवती नवविद्रुम आभा -
यत् चेतसि स्फुरसि तारकिता इव सन्ध्या।
एकः स एव भुवनत्रय सुन्दरीणां
कन्दर्पतां व्रजति पञ्च शरीम् विना अपि॥१२॥

मुक्ता-	= मोतियों के	स एकः एव	= वही एक (भक्त)
विभूषणवती	= भूषणों से सुशोभित,	भुवनत्रय-	= तीनों भुवनों को (पर शासन करने वाली)
नवविद्रुम-	= नये रुद्राक्ष की	सुन्दरीणां	= उत्तम शक्तियों के
आभा	= दीप्तिवाली (आप)	कन्दर्पतां	= कामदेवपन को[1]
यत्	= जिस (भक्त) के		
चेतसि	= मन में		
तारकिता	= तारों से भरी हुई	पंचशरीं	= पांच बाणों के (धारण किये)
सन्ध्या	= सन्ध्या		
इव	= जैसी	विनापि	= बिना ही
		व्रजति	= प्राप्त होता है।
स्फुरसि	= विकास में आती हो		

(ध्यान (अपना साक्षात्कार कराती हो)

[1] जिस प्रकार से कामदेव के आवेश से युवतियां मोहित हो जाती हैं, उसी प्रकार उत्कृष्ट शक्तियां भी उत्तम भक्त के वश में हो जाती हैं।

ये भावयन्त्यमृतवाहिभिरंशुजालै-

राप्यायमानभुवनाममृतेश्वरीं त्वाम्।

ते लङ्घयन्ति ननु मातरऽलङ्घनीयां

ब्रह्मादिभिः सुरवरैरपि कालकक्ष्याम् ॥१३॥

पदच्छेदः-

ये भावयन्ति अमृतवाहिभिः अंशुजालैः

आप्यायमानभुवनाम् अमृत ईश्वरीम् त्वाम्।

ते लङ्घयन्ति ननु मातः! अलङ्घनीयाम्

ब्रह्मादिभिः सुरवरैः अपि कालकक्ष्याम् ॥१३॥

ये	जो (भक्त)	अलङ्घनीयां	= पार करने में अति कठिन
त्वां	तुम		
अमृतवाहिभिः	= अमृत बहाने वाले	काल	= ~~काल कलना~~
अंशुजालैः	= किरणों के समूह से	काल-	= काल (समय) (भूत, वर्तमान, भविष्य)
आप्यायमान भुवनाम् ~~भुवनाम्~~	= (तीनों) भुवनों का	कक्ष्यां	= कलना को
~~आप्यायमान~~	= सींचन करने वाली	ननु	= निश्चय ही
अमृतेश्वरीं	= ~~(हे)~~ अमृत की स्वामिनी की	लङ्घयन्ति	= पार कर जाते हैं।
~~त्वां~~	~~तुम्हारी~~		
~~ये~~	~~= जो (भक्त)~~		
~~त्वाम्~~	= ~~आपको~~		
भावयन्ति	= भावना करते हैं, (एकाग्र चित्त से ध्यान करते हैं)		
मातः!	= हे माता!		
ते	= वे ~~(भक्त)~~ (सभी)		
ब्रह्मादिभिः	= ब्रह्मा इत्यादि		
सुरवरैः	= श्रेष्ठ देवताओं से		
अपि	= भी		

यः स्फाटिकाक्ष गुण पुस्तक कुण्डिकाढ्यां
व्याख्या समुद्यत करां शरदिन्दु शुभ्राम्।
पद्मासनां च हृदये भवतीमुपास्ते
मातः स विश्वकवितार्किक चक्रवर्ती ॥ २४ ॥

पदच्छेदः -

यः स्फाटिक अक्ष गुण पुस्तक कुण्डिका आढ्यां
व्याख्या सम् उद्यतकरां शरत् इन्दु शुभ्राम्।
पद्म आसनां च हृदये भवतीम् उपास्ते
मातः! स विश्व कवि तार्किक चक्रवर्ती ॥ २४ ॥

मातः!	= हे माता!	पद्म	कमल के आसन पर
यः	= जो (भक्त)	पद्मासनां	= पद्मासन में बैठी हुई
स्फाटिक-	= स्फटिक मणि की		
अक्ष-	= अक्षमाला,	भवतीं	= आपकी
गुण-	= रस्सी (धागा),	हृदये	= हृदय में
पुस्तक-	= पुस्तक, (तथा)	उपास्ते	= उपासना करता है
कुण्डिका-	= कूँडी (कमण्डल) से	स	= वह
आढ्यां	= शोभित (तथा)	विश्व-	= सभी जगत के
व्याख्या-	= उपदेश करने के लिए	कवि-	= कवियों (और)
समुद्यत-	= उठाये हुए	तार्किक-	= तर्क के जानने वालों में
करां	= हाथ वाली,	चक्रवर्ती	= सब से उत्तम बन जाता है।
शरद्-	= शरद ऋतु के		
इन्दु-	= चन्द्रमा (जैसी)		
शुभ्रां	= तेज वाली		
च	= और		

—o—

बर्हावतंस युत बर्बर केश पाशां
गुञ्जावलीकृत घन स्तन हार शोभाम् ।
श्यामां प्रवालवदनां सुकुमार हस्तां
त्वामेव नौमि शबरीं शबरस्य जायाम् ।। १५ ।।

पदच्छेदः -
बर्ह अवतंस युत बर्बर केश पाशाम्
गुञ्जा अवली कृत घन स्तन हार शोभाम्।
श्यामां प्रवालवदनां सुकुमार हस्ताम्
त्वां एव नौमि शबरीं शबरस्य जायाम्॥१५॥

बर्ह- = मोर के पंख के
अवतंस- = पंखों के ताज से
युत- = युक्त,
बर्बर- = बर्बर, (जैसे (कोमल और चमकदार) — काश्मीरी बबूर
केश पाशां = बालों वाली,
~~घन स्तन~~ ~~घने स्तनों पर~~
गुंजावली- = गुंजाहारों से
कृत- = किये हुए
घन स्तन- घने स्तनों पर
हार शोभां = हारों की ~~शोभावाली~~
~~शोभां = शोभा वाली~~

हार- = हारों की
शोभां = शोभा वाली,
श्यामां = श्याम वर्ण,

प्रवाल = मूंगे (जैसे (लाल)
वदनां = मुख वाली
सुकुमार = कोमल[1]
हस्तां = हाथों वाली, (ऐसी)
त्वामेव = तुम्हे ही[2]
शबरी = हे शबरी
शबरस्य = शंकर की
जायां = शक्ति को
नौमि = मैं शरण लेता हूँ।

---

1 अथवा हाथों में कुमार अर्थात कार्तिक स्वामि लिया है जिसने।
2 किरातिनी के रूप में शिव की शक्ति।

अर्धेन किं नवलताललितेन मुग्धे!
क्रीतं विभोः परुषमर्धमिदं त्वयेति।
आलीजनस्य परिहासवचांसि मन्ये
मन्दस्मितेन तव देवि! जडी भवन्ति॥१६॥

पदच्छेदः -

अर्धेन किं नवलताललितेन मुग्धे!
क्रीतं विभोः परुषम् अर्धं इदं त्वया इति।
आलीजनस्य परिहास वचांसि मन्ये
मन्द स्मितेन तव देवि! जडी भवन्ति॥१६॥

मुग्धे!	= हे सुन्दरी! ~~मूर्ख~~ (पार्वती!)	इति	= इस प्रकार के
किं त्वया	= क्यों तूने	आलीजनस्य	= सखियों के
नवलता-	= नई लता (जैसे कोमल और सुन्दर)	परिहास-	= हंसी के
		वचांसि	= वचन
		देवि!	= हे देवी!
ललितेन-	= (तथा) प्रेम से पाले हुए	तव	= आपकी
		मन्द-	= कोमल (मनको हरने वाली)
अर्धेन	= अपने आधे शरीर के बदले	स्मितेन	= मुस्कराहट से
		मन्ये	= मेरी समझ में
विभोः	= शिव का	जडी	= ~~जड़~~ जड़
इदं	= यह	भवन्ति	= बन जाते हैं।[1]
परुषम्	= कठिन (खुरदुरा)		
अर्धं	= आधा शरीर		
क्रीतं	= मोल लिया?		

[1] अर्थात् देवी के अन्तर्मुख होने से ही सहेलियां (इन्द्रिय शक्तियां) जड़ (सत्ताहीन) हो जाती हैं।

ब्रह्माण्ड बुद्बुद कदम्बक संकुलोऽयं
मायोदधिर्विविध दुःख तरङ्ग मालः।
आश्चर्यमम्ब! झटिति प्रलयं प्रयाति
त्वद्ध्यान सन्तति महा वडवा मुखाग्नौ ॥ १७॥

पदच्छेदः -

ब्रह्माण्ड बुद्बुद कदम्बक सङ्कुलः अयम्
माया उदधिः विविध दुःख तरङ्ग मालः।
आश्चर्यं अम्ब! झटिति प्रलयं प्रयाति
त्वत् ध्यान सन्तति महा वडवा मुख अग्नौ ॥१७॥

अम्ब! = हे माता!
अयं = यह
ब्रह्माण्ड- = अनेकों ब्रह्माण्ड रूप
बुद्बुद- = बुलबुलों के
कदम्बक- = अगणित समूहों से
संकुलो = ~~व्याप्त~~ व्याप्त
माया- = माया रूपी
उदधिः = सागर (~~को~~)
विविध- = नाना प्रकार के
दुखतरंग-माल: = { दुख की तरंगों से भरा हुआ
त्वत- = तुम्हारे
ध्यान - सन्तति- = { निरन्तर ध्यान रूपी
महा- = बड़े
वाडवामुख-अग्नौ = { वाडव अग्नि में
झटिति = क्षणमात्र में (ध्यान करते ही)
प्रलयं = लयभाव को
प्रयाति = प्राप्त होता है ~~जाती है~~
(अर्थात माया सागर का संहार हो जाता है।)
आश्चर्यम् = यह बड़े आश्चर्य की बात है।

दाक्षायणीति कुटिलेति गुहारणीति
कात्यायनीति कमलेति कलावतीति।
एका सती भगवती परमार्थतोऽपि
सन्दृश्यसे बहुविधा ननु नर्तकीव ॥१८॥

पदच्छेदः -

दाक्षायणी इति कुटिला इति गुहारणी इति
कात्यायनी इति कमला इति कलावती इति।
एका सती भगवती परमार्थतः अपि
संदृश्यसे बहुविधा ननु नर्तकी इव॥१८॥

भगवती	ऐश्वर्यशालिनी
परमार्थतः	सच्चे स्वरूप से
एका	एक ही (अद्वितीय)
सती अपि	होती हुई भी
दाक्षायणी इति	दक्ष प्रजापति की बेटी,
कुटिला इति	टेढ़ी चलने वाली कुण्डलिनी रूप,
गुहारणी इति	हृदय रूपी गुफाओं में वास करनेवाली,
कात्यायनी	कात्यायन ऋषि की पुत्री
कमला इति	लक्ष्मी रूप अथवा कमल रूप संकोच विकासमय (सृष्टि संहार करनेवाली)
कलावती इति	(1) कलाओ युक्त ऐसे ऐसे
ननु	निश्चय रूप से
नर्तकी इव	नाचने वाली स्त्री की तरह
बहुविधा	अनेकों प्रकार से
सदृश्यते	दीखती हो (अनेकों रूप धारण करती हो)

(1) चन्द्रमा की १६ कला, शिव से पृथिवी तक ३६ तत्त्व रूप कला, अकार से हकार तक वर्णमाला रूप ५० कला,

आनन्द लक्षण मनाहत नाम्नि देशे
नादात्मना परिणतं तव रूपमीशे।
प्रत्यङ् मुखेन मनसा परिचीयमानं
शंसन्ति नेत्र सलिलैः (पुलकैश्च) धन्याः ॥ १९॥ पुलकैश्च

पदच्छेदः -

आनन्द लक्षणम् अनाहत नाम्नि देशे
नाद आत्मना परिणतं तव रूपम् ईशे!
प्रत्यक् मुखेन मनसा परिचीयमानं
शंसन्ति नेत्र सलिलैः पुलकैः च धन्याः ॥१९

ईशे! = हे ऐश्वर्यस्वरूपिणी!
धन्याः = श्लाघ्य और
उत्तम भक्त

(तथा)

तव = तुम्हारे
आनन्द- = आनन्द ही
लक्षणं = लक्षण है जिसका
(ऐसे तुम्हारे)
रूपं = रूप को
अनाहत- = अनाहत (मध्यमा वाक्)
नाम्नि = नाम वाले
देशे = स्थान पर
नादात्मना = नादरूप से (शब्दों का मूलरूप)
परिणतं = परिणाम में
आया हुआ

प्रत्यङ्मुखेन = सन्मुख रूपवाले
मनसा = मन से
परिचीयमानं = बढ़ाया हुआ,
नेत्र सलिलैः = आंसुओं की
अश्रु धाराओं ~~द्वारा~~
च = तथा
पुलकैः = रोमहर्षों द्वारा
शंसन्ति = जतलाते हैं।

त्वं चन्द्रिका शशिनि तिग्मरुचौ रुचिस्त्वं
त्वं चेतनासि पुरुषे पवने बलं त्वम् ।
त्वं स्वादुतासि सलिले शिखिनि त्वमूष्मा
निःसारमेव निखिलं त्वदृते यदि स्यात् ॥२०॥

पदच्छेदः

त्वं चन्द्रिका शशिनि तिग्मरुचौ रुचिः त्वं
त्वं चेतना असि पुरुषे पवने बलं त्वं
त्वं स्वादुता असि सलिले शिखिनि त्वं ऊष्मा
निःसारम् ~~एसम्~~ एव निखिलं त्वत् ऋते यदि स्यात् ॥२०॥

त्वम्	= तुम	त्वम्	= तुम
शशिनि	= चन्द्रमा में	सलिले	= जल में
चन्द्रिका	= चान्दनी (रूप हो) प्रकाश	स्वादुता	= रस (रूप)
त्वम्	= तुम	असि	= हो,
तिग्मरुचौ	= सूर्य में	त्वम्	= तुम
रुचिः	= दीप्ति (रूप हो)	शिखिनि	= अग्नि में
त्वम्	= तुम	ऊष्मा	= गर्मी (हो)।
पुरुषे	= पुरुष में	यदि	= यदि
चेतना	= बुद्धि	त्वदृते	= (यह सब तत्त्व) तुम्हारी सत्ता बिना
असि	= हो.		
त्वम्	= तुम	स्यात्	= हों
पवने	= वायु में	निखिलं	= (तो) यह सारा विश्व
बलं	= बल (हो)	निःसारमेव	= सत्ता रहित है।

ज्योतींषि यद्दिवि चरन्ति यदन्तरिक्षं
सूते पयांसि यदहिर्धरणीं च धत्ते ।
यद्वाति वायुरनलो यदुदर्चिरास्ते
तत्सर्वमम्ब! तव केवलमाज्ञयैव ॥ २२ ॥

पदच्छेदः –

ज्योतींषि यत् दिवि चरन्ति यत् अन्तरिक्षं
सूते पयांसि यत् अहिः धरणीं च धत्ते।
यत् वाति वायुः अनलः यत् उदर्चिः आस्ते
तत् सर्वम् अम्ब! तव केवलम् आज्ञया एव ॥ २२ ॥

यत् = जो (यह)
ज्योतींषि = तारागण
दिवि = आकाश में
चरन्ति = फिरते हैं,
यत = जो
अन्तरिक्षं = आकाश
पयांसि = जलों को
सूते = उत्पन्न करता है,
~~च = और~~
यत् ~~च~~ ~~और~~ जो
अहिः = शेषनाग
धरणीं = पृथ्वी को
धत्ते = धारण करता है,
यत = जो
वायुः = वायु
वाति = चलता है।

~~च = और~~
यत् च = और जो
अनलो = अग्नि
उदर्चिः = ऊँची दीप्तिवाला है
आस्ते
अम्ब! = हे माता!
तत्सर्वं = वह सब
केवलं = केवल
तव एव = तुम्हारी ही
आज्ञया = आज्ञा से
~~एव = ही~~
~~आस्ते~~ = (स्थिति प्राप्त किये हुए हैं)

—

सङ्कोचमिच्छसि यदा गिरिजे! तदानीं
वाक्तर्कयोस्त्वमसि भूमिरनामरूपा।
यद्वा विकासमुपयासि यदा तदानीं
त्वन्नामरूपगणनाः सुकरी भवन्ति ।। २२।।

पदच्छेदः-

संङ्कोचं इच्छसि यदा गिरिजे! तदानीं
वाक् तर्कयोः त्वम् असि भूमिः अनामरूपा।
यत् वा विकासम् उपयासि यदा तदानीम्
त्वत् ~~त्व~~ नामरूपगणनाः सुकरी भवन्ति॥२२॥

गिरिजे! = हे पार्वती!
यदा = जब (तुम)
~~त्व त्व~~. = तुम
संकोचं = स्वरूप का संकोच
इच्छसि = (ग्रहण करना) चाहती हो,
तदानीं = तब
~~त्व~~ = ~~तुम~~
वाक्-तर्कयोः = { वाणी और तर्क (विचार) में
अनामरूपा = नामों और रूपों रहित ~~है~~
भूमिः = अवस्था
असि = हो,

यद्वा यदा = ~~और जब~~ या जब
विकासं = स्वरूप के विकास को
उपयासि = प्राप्त करती हो
तदानीं त्वत् = (~~त्व~~) उस अवस्था में तुम्हारे
नामरूप = नामों और रूपों की
गणनाः = गिनती
सुकरी = आसान
भवन्ति[1] = हो जाती है।*

[1] सभी स्थूल या सूक्ष्म वेद्यों के नाम और रूप तुम्हारे ही नाम और रूप हैं।

इत्यादि

भोगाय देवि भवतीं कृतिनः प्रणम्य
भ्रूकिङ्करीकृतसरोजगृहासहस्राः ।
चिन्तामणिप्रचयकल्पितकेलिशैले
कल्पद्रुमोपवन एव चिरं रमन्ते ॥ २३ ॥

पदच्छेदः -

भोगाय देवि! भवतीं कृतिनः प्रणम्य
भ्रूकिङ्करी कृत सरोजगृहाः सहस्राः।
चिन्तामणि प्रचय कल्पित केलि शैले
कल्पद्रुम उपवने एव चिरं रमन्ते॥२३॥

देवि!	= हे देवी!	चिन्तामणि-	= चिन्तामणि रत्नों के
~~कृतिनः~~	~~= क्रियावान पुरुष~~	प्रचय-	= समूहों से
~~भोगाय~~	~~भोग (सांसारिक तथा पारमार्थिक) ~~मोक्ष~~ प्राप्त करने के लिए~~	कल्पित-	= बनाये हुए
		केलि-	= क्रीडा रूपी
		शैले	= पर्वत पर
~~भवतीं~~	~~= आपको~~	कल्पद्रुम-	= कल्पवृक्षों के
~~प्रणम्य~~	~~= प्रणाम करके (~~आपकी~~)~~	उपवने ~~एव~~ =	बागों में
		एव	= ही
भ्रू-	= भौओं के	चिरं	= अनन्त काल ~~तक~~
किंकरीकृत-	= दास बने हुए	रमन्ते	= ऐश्वर्य भोगते हैं। (क्रीडा करते हैं)
~~सहस्राः~~	~~= हजारों~~		
सरोजगृहा सहस्राः	~~लक्ष्मियों वाले~~ हज़ारों लक्ष्मियों वाले		

कृतिनः	(~~[illegible]~~ क्रियावान पुरुष
भोगाय	भोग (सांसारिक तथा पारमार्थिक) प्राप्त करने के लिये
भवतीं	आप को
प्रणम्य	प्रणाम करके

1. अर्थात एक ही नहीं अनन्त लक्ष्मियाँ (भोगलक्ष्मी, मोक्षलक्ष्मी, भक्तिलक्ष्मी इत्यादि) और ऐश्वर्य उनके वश में हो जाते हैं। यह सब लक्ष्मियां उस पुरुष के ~~भ्रू~~ आंखों के इशारों पर नाचती हैं

हन्तुं त्वमेव भवसि त्वदधीनमीशे
संसारतापमखिलं दयया पशूनाम्।
वैकर्तनी किरणसंहतिरेव शक्ता
घर्मं निजं शमयितुं निजयैव वृष्ट्या॥ २४॥

पदच्छेदः -

हन्तुं त्वम् एव भवसि त्वत् अधीनं ईशे!
संसारतापम् अखिलं दयया पशूनाम्।
वैकर्तनी किरण संहतिः एव शक्ता
घर्मं निजं शमयितुं निजया एव वृष्ट्या ॥२४॥

ईशे!	= हे स्वतंत्र इच्छा वाली स्वामिनी!	~~वैकर्तनी~~	~~= सूर्य की~~
		~~वैकर्तनी~~	~~(जैसे) सूर्य की~~ (जैसे)
पशूनां	= जन्म मरण में फंसे हुए जीवों के	वैकर्तनी-	= सूर्य की
अखिलं	= सारे	किरण-	= किरणों का
संसारतापं	= जन्म मरण से उत्पन्न हुए दुखको,	संहतिरेव	= समूह ही
~~त्वदधीनं~~	=	निजं	= आप उत्पन्न की हुई
त्वत्	= (जो) तुम्हारे ही	घर्मं	= गर्मी को
अधीनं	= आधीन है,	निजया एव	= अपनी ही (शक्ति से उत्पन्न की हुई)
दयया	= अनुग्रह करके	वृष्ट्या	= वर्षा से
हन्तुं	= नाश करने के लिए	शमयितुं	= शांत करने के लिए
त्वमेव	= तुम ही		
भवसि	= समरथ हो।	शक्ता	= समरथ है।

शक्तिः शरीरमधिदैवतमन्तरात्मा
ज्ञानं क्रिया करणमासन जालमिच्छा।
ऐश्वर्यमायतनमावरणानि च त्वं
किं तन्न यद्भवसि देवि शशाङ्कमौलेः ॥ २५॥

पदच्छेदः

शक्तिः शरीरं अधिदैवतं अन्तर् आत्मा
ज्ञानं क्रिया करणं आसन जालं इच्छा।
ऐश्वर्यं आयतनम् आवरणानि च त्वं
किं तत् न यत् भवसि? देवि! शशाङ्कमौलेः॥ २५॥

शशाङ्क - = चन्द्रमा है
~~अंक = चिह्न है~~
मौले: = ~~जिसके~~ माथे पर जिसके
(ऐसे शिव की)
देवि! = क्रीडनशील शक्ति!
शक्तिः = प्राणशक्ति,
शरीरं = स्थूल शरीर,
अधिदैवतम् = शरीर के अधिष्ठत देव
(अर्थात् दस इन्द्रियां),
अन्तरात्मा = अन्तःकरण,
ज्ञानं = ज्ञान शक्ति,
क्रिया = क्रिया शक्ति,
करणम् = क्रियाओं का करना,
आसन- = आसन-
जालम् = समूह,

इच्छा = इच्छा (स्वातंत्र्य) शक्ति,
ऐश्वर्यम् = सर्वकर्तृभाव, सर्वज्ञताभाव,
आयतनम् = आश्रय
च = और
आवरणानि = स्वरूप के छिपाने के विघ्न
(यह सब कुछ)
त्वम् = तुम ही हो।
तत् किं = वह कौन सी वस्तु (भाव) है
यत् = जो
न भवसि = (तुम) नहीं बनती हो॥

भूमौ निवृत्तिरुदिता पयसि प्रतिष्ठा
विद्याऽनले मरुति शान्तिरतीतशान्तिः।
व्योम्नीति याः किल कलाः कलयन्ति विश्वं
तासां विदूरतरमम्ब! पदं त्वदीयम् ॥२६॥

पदच्छेदः-
भूमौ निवृत्तिः उदिता पयसि प्रतिष्ठा
विद्या अनले मरुति शान्तिः अतीतशान्तिः
व्योम्नि इति याः किल कलाः कलयन्ति विश्वं
तासां विदूरतरम् अम्ब! पदं त्वदीयम्॥२६॥

भूमौ	= पृथिवी तत्त्व में	इति	= इस प्रकार
निवृत्तिः	= निवृत्ति कला,	याः	= जो
पयसि	= जल तत्त्व में	कलाः	= कलायें
प्रतिष्ठा	= प्रतिष्ठा कला,	विश्वं	= (३६ तत्त्वमय) जगत को
अनले	= ~~आग में~~ अग्नि तत्व में	किल	= निश्चय ही
विद्या	= विद्या कला,	कलयन्ति	= प्रकट करती हैं
~~व्योम्नि~~		अम्ब!	= हे माता!
मरुति	= वायु तत्त्व में	त्वदीयं	= तुम्हारा
शांतिः	= शांति कला,	पदं	= स्थान
व्योम्नि	= आकाश तत्त्व में	तासां	= इन सब कलाओं से भी
अतीत शांतिः	= शान्त्यतीत कला,	विदूरतरम्	= बहुत ही ऊँचा है।
उदिता	= उदय में आई हैं।		

यावत्पदं पदसरोजयुगं त्वदीयं
नाङ्गीकरोति हृदयेषु जगच्छरण्ये ।
तावद्विकल्प जटिलाः कुटिल प्रकारा-
स्तर्क ग्रहाः समयिनां प्रलयं न यान्ति ।। २७।।

पदच्छेदः-

यावत् पदं पदसरोजयुगं त्वदीयं
न अङ्गीकरोति हृदयेषु जगत् शरण्ये!
तावत् विकल्प जटिलाः कुटिल प्रकाराः
तर्कग्रहाः समयिनां प्रलयं न यान्ति ॥ २७॥

जगच्छरण्ये (जगत्+शरण्ये!) → हे जगत की रक्षा करने वाली देवी!

यावत्	= जब तक	समयिनां	= भिन्न२ मत-वादियों के
त्वदीयम्	= तुम्हारा	विकल्प-	= विकल्पों के कारण
पदसरोज	= चरण कमलों का	जटिलाः	= पेचदार बने हुए
युगं	= जोडा	कुटिल-	= कुटिल
हृदयेषु	= हृदयों में	प्रकाराः	= प्रकार वाले
पदं	= स्थान	तर्क-	= विवादरूपी
न अंगीकरोति	= अंगीकार न करे [1]	ग्रहाः	= हठ
तावत्	= तब तक	प्रलयं	= समाप्त
		न यांति	= नहीं होते हैं।।

मोह में फंसा हुआ जीव

1 अर्थात जब तक ~~जीव मोह में फंसा~~ तुम्हारी शरण न ले।

यद्देवयान पितृयान विहारमेके
कृत्वा मनः करण मण्डल सार्वभौमम्
याने निवेश्य तव कारण पञ्चकस्य
पर्वाणि पार्वति नयन्ति निजासनत्वम्॥ २८॥

पदच्छेदः -

यत् देवयान पितृयान विहारम् एके
कृत्वा मनः करण मण्डल सार्वभौमम्।
याने निवेश्य तव कारणपञ्चकस्य
पर्वाणि पार्वति! नयन्ति निजासनत्वम्॥ २८॥

पार्वति!	= हे पार्वती!		(वह)
यत्	= जो	तव	= तुम्हारे
एके	= कुछ उत्कृष्ट योगी	याने	= (सुषुम्ना) मार्ग में
		निवेश्य	= प्रवेश करके
मनः	= मन को	कारण पंचकस्य	= { पांच कारणों[1] के
करण-	= इन्द्रियों के		
मण्डल-	= समूह का	पर्वाणि	= सिरों को
सार्वभौमम्	= चक्रवर्ती राजा	निज	= अपने
		आसनत्वम्	= आसन
कृत्वा	= बनाकर	नयन्ति	= बनाते हैं। [2]
देवयान-	= देवताओं के मार्ग (प्राण)		
पितृयान-	= (और) पितृमार्ग (अपान) में		
विहारम्	= फिरते हैं (अभ्यास करते हैं)		

---

1 जगत् की सृष्टि इत्यादि करने के पांच कारण
ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, सदाशिव, ईश्वर
2 अर्थात इन से भी ऊंची पदवी प्राप्त करते हैं।

स्थूलासु मूर्तिषु मही प्रमुखासु मूर्तेः
कस्याश्चनापि तव वैभवमम्ब यस्याः।
पत्या गिरामपि न शक्यत एव वक्तुं
सासि स्तुता किल मयेति तितिक्षितव्यम्॥ २९॥

पदच्छेदः -

स्थूलासु मूर्तिषु मही प्रमुखासु मूर्तेः
कस्याः चन अपि तव वैभवम् अम्ब! यस्याः।
पत्या गिराम् अपि न शक्यते एव वक्तुं
सा असि स्तुता। किल मया इति तितिक्षितव्यम्॥ २९॥

मही-	= पृथिवी ~~से~~	न	= नहीं
प्रमुखासु	= ~~प्रमुख~~ इत्यादि	न शक्यते	= असमर्थ हैं
स्थूलासु	= स्थूल	सा	= वही (आप ऐसे उत्कृष्ट महिमा वाली)
मूर्तिषु	= रूपों में से		
कस्याश्चन	= किसी एक ~~का~~	अम्ब!	= हे माता!
~~अपि~~	~~= भी~~	मया	= मुझ जैसे तुच्छ) से
मूर्तेः	= रूप ~~का~~ का		
अपि	= भी	किल	= निश्चय ही
यस्याः	= जिस	स्तुता असि	= स्तुति की जा रही है
तव	= तुम्हारे (अकथनीय स्वरूप का)	इति	= (मेरी) यह धृष्टता
वैभवम्	= प्रभाव (महिमा) को		
गिरां	= वाणियों का		
पत्या	= स्वामी (ब्रह्माजी)	तितिक्षितव्यम्	= कृपया आप सहलें (अर्थात् मुझे क्षमा करें)
अपि	= भी		
वक्तुं	= वर्णन करने के लिए		

कालाग्नि कोटि रुचिमम्ब षडध्व शुद्धा-
वाप्लावनेषु भवतीममृतौघ वृष्टिम् ।
श्यामां घनस्तन तटां सकली कृतौ च
ध्यायन्त एव जगतां गुरवो भवन्ति ॥ ३० ॥

पदच्छेदः -

कालअग्नि कोटि रुचिम् अम्ब! षट् अध्व शुद्धौ
आप्लावनेषु भवतीम् अमृत ओघ वृष्टिम् ।
श्यामां घन स्तन तटां सकलीकृतौ च
ध्यायन्तः एव जगतां गुरवः भवन्ति ॥ ३० ॥

अम्ब!	= हे माता!	घनस्तनतटां	= भारी स्तनों से (माता के दूध रूप में दूध देती हुई (आपको भक्त)
षडध्व-	= छः मार्गों को[1]		
शुद्धौ	= शुद्ध करने में[2]		
भवतीं	= आपको		
कालग्नि-कोटि-	= करोड़ों कालाग्नि रुद्रों जैसी	ध्यायन्त एव	= एकाग्रचित से ध्यान करते हुए ही (क्षणमात्र में)
रुचिम्	= दीप्ति (तेज) वाली,	जगतां	= सभी जगतों को
आप्लावनेषु	= इन भुवनों को सींचने (छिड़) करने में	गुरवो	= गुरु[3]
		भवन्ति	= बन जाते हैं।
अमृतौघ-	= अमृत से भरी हुई		
वृष्टिं	= वर्षा रूप,		
च	= और		
सकली-कृतौ	= इनको सम्पूर्ण बनाने (स्थिति करने) में		
श्यामां	= श्याम वर्ण		

---

1. ~~वर्ण~~, वर्ण, पद, [illegible], तत्त्व, भुवन, ~~[illegible]~~
अभेद रूप बनाने [illegible] आदि

विद्यां परां कतिचिदम्बरमम्ब केचि-
दानन्दमेव कतिचित्कतिचिच्च मायाम् ।
त्वां विश्वमाहुरपरे वयमामनाम
साक्षादपारकरुणां गुरुमूर्तिमेव ॥३१॥

पदच्छेदः -

विद्यां परां कतिचित् अम्बरम् अम्ब! केचित्
आनन्दम् एव कतिचित् कतिचित् च मायाम्।
त्वां विश्वम् आहुः अपरे वयम् आमनाम
साक्षात् अपार करुणां गुरुमूर्तिम् एव॥३१॥

अम्ब! = हे माता!
त्वां = तुमको
कतिचित् = कुछ भक्त
परां विद्यां = परा (उत्कृष्ट) ज्ञान रूप,
केचित् = कुछ
अम्बरम् = आकाश रूप (चिदाकाश),
कतिचित् = कुछ
आनन्दमेव = (केवल आनन्द रूप ही।
च = और
कतिचित् = कुछ
मायाम् = (भेद उत्पन्न करने वाली) माया रूप,

त्वां = तुमको
विश्वं = जगत रूप ही
आहुः = कहते हैं
वयम् = (परन्तु) हम (इनसे भिन्न भक्त) (आपको)
साक्षाद् = प्रत्यक्ष
अपार = पाररहित
करुणां = अनुग्रहरूप
गुरुमर्त्तिमेव = सद्गुरु का स्वरूप ही
आमनाम = कहते हैं।

अपरे = इन से भिन्न कुछ लोग

कुवलयदलनीलं बर्बरस्निग्धकेशं
पृथुतरकुचभाराक्रान्तकान्तावलग्नम्।
किमिह बहुभिरुक्तैस्त्वत्स्वरूपं परं नः
सकलभुवनमातः सन्ततं सन्निधत्ताम्॥३२॥

पदच्छेदः-

कुवलयदलनीलं बर्बर स्निग्धकेशं
पृथुतरकुचभार आक्रान्त कान्त अवलग्नम्।
किम् इह बहुभिः उक्तैः त्वत् स्वरूपं परं नः
सकलभुवनमातः! सन्ततं सन्निधत्ताम्॥३२॥

सकल-	= हे सभी	पृथुतर-	= मोटे
भुवन-	= भुवनों की	कुचभार-	= स्तनों के भार से
मातः!	= माता!	आक्रान्त-	= घेरे हुए
इह	= यहां	कान्त-	= सुन्दर
बहुभिः	= अधिक	अवलग्नम्	= कमरवाला
उक्तैः	= कहने से	*नः	= हमें
किं	= क्या (लाभ है)?	सन्ततं	= नित्य

(केवल इतनी प्रार्थना है कि) सन्निधत्ताम् = प्रकट रहे।

त्वत्- = तुम्हारा
परं = उत्कृष्ट
स्वरूपं = स्वरूप

कुवलयदल- = ~~कुवलय~~ नीली कुईं के पुष्पों जैसा
नीलं = ~~नील~~ श्याम वर्ण,
बर्बर- = बर्बर (जैसे) चिकने
स्निग्धकेशं = चिकने चमकीले बालों वाला,

* त्वत्- तुम्हारा
परं उत्कृष्ट
स्वरूपं स्वरूप

(') एक चिकनी चमकीली लता जिसे काश्मीरी में बबर कहते हैं।

ॐ

अथ सकल जननी स्तवः पञ्चमः

ॐ अजानन्तो यान्ति क्षयमवशमन्योन्यकलहै-
रमी मायाग्रन्थौ तव परिलुठन्तः समयिनः।
जगन्मातर्जन्मज्वरभयतमःकौमुदि! वयं
नमस्ते कुर्वाणाः शरणमुपयामो भगवतीम् ॥१॥

पदच्छेदः -

अजानन्तः यान्ति क्षयम् अवशम् अन्योन्य कलहैः
अमी माया ग्रन्थौ तव परिलुठन्तः समयिनः।
जगत्‌मातः! जन्मज्वरभयतमःकौमुदि! वयं
नमः ते कुर्वाणाः शरणम् उपयामः भगवतीम् ॥१॥

जगन्मातः!	हे जगतों को उत्पन्न करने वाली मां!
जन्मज्वर- भयतमः- कौमुदि!	जन्ममरण रूपी ज्वर के भय रूपी अंधकार के लिये चांदनी रूप (अन्धकार को नाश करने वाली)
अमी समयिनः	यह सभी भिन्न मत-वादी
अजानन्तः	तुम्हारे सच्चे स्वरूप को न जानते हुए
अन्योन्य-	एक दूसरे के साथ
कलहैः	तर्क वितर्क रूप झगडा करने के कारण
तव	तुम्हारी
मायाग्रन्थौ	माया रूपी गांठ में (फंदे में)
परिलुठन्तः	गिरते फंसते हुए
अवशम्	बेबस (परतंत्र) होकर

क्षयं यान्ति	नाश को प्राप्त होते हैं (जन्ममरण रूपी चक्र में फंसते हैं)
वयं	हम (शरणागत भक्त)
ते भगवतीम्	तुम ऐश्वर्य शालिनी भगवती को
नमः	नमस्कार
कुर्वाणाः	करते हुए (देहाभिमान को तुम में अर्पण करते हुए)
शरणं	शरण में
उपयामः	आते हैं

वचस्तर्कागम्य स्वरस परमानन्द विभव-
प्रबोधाकाराय द्युतितुलित नीलोत्पलरुचे।
शिवस्याराध्याय स्तनभरविनम्राय सततं
नमो यस्मै कस्मै चन भवतु मुग्धाय महसे ॥२॥

पदच्छेद: -

वच: तर्क अगम्य स्वरस परम-आनन्द विभव-
प्रबोध आकाराय द्युति तुलित नील उत्पल रुचे!
शिवस्य आराध्याय स्तन भर विनम्राय सततं
नम: यस्मै कस्मै चन भवतु मुग्धाय महसे ॥२॥

द्युति -	तेज में	मुग्धाय	सुन्दर (आनन्द रूप)
तुलित -	समान बने हुए	महसे	तेज को (चित् रूप को)
नीलोत्पल -	कमल जैसी	नमो भवतु	नमस्कार हो ॥

रुचे! दीप्ति वाली (हे देवी!)
वच: - वाणी (और)
तर्क - विचार से
अगम्य - न जानने योग्य,
स्वरस - अपने ही (चित्) रस से
परमानंदविभव - परमानंदरूप ऐश्वर्य को
प्रबोधाकाराय जगाने वाले स्वरूप वाली (तुम देवी को)
शिवस्य शिव से भी
आराध्याय आराधना करने योग्य (तुम देवी को),
स्तनभरविनम्राय भारी वक्ष:-स्थल के कारण झुकी हुई देवी को (जगत की सृष्टि करने के लिए उद्योग में आई हुई)
यस्मै कस्मै चन किसी अलौकिक (मन और वाणी के अगोचर)

लुठद्गुञ्जाहार स्तनभर नमन्मध्यलतिका-
मुदञ्चद्घर्माम्भः कण गुणित नीलोत्पलरुचम् ।
शिवं पार्थ त्राण प्रवण मृगयाकार गुणितं
शिवामन्वग्यान्तीं शबरमहमन्वेमि शबरीम् ॥३॥

पदच्छेदः-

लुठत् गुञ्जाहार स्तन भर नमन् मध्यलतिकाम्
उदञ्चत् घर्माम्भः कण गुणित नीलोत्पलरुचम्।
शिवं पार्थत्राण प्रवण मृगया आकार गुणितं
शिवां अन्वक्यान्तीं शबरं अहं अन्वेमि शबरीम् ॥३॥

उदञ्चत्-	निकलते हुए	शिवां	शिव की शक्ति
घर्माम्भः-	पसीने के (कतरे)		(पार्वती) को
कण -	परमाणुओं से	अहं	मैं
गुणित-	समान बने हुए	अन्वेमि	बारबार प्रणाम
नीलोत्पलरुचम्	कमल की शोभायुक्त (मुख वाले) (शिव के)		करता हूँ ॥

पार्थत्राण- अर्जुन की रक्षा करने में
प्रवण- निपुण
मृगयाकार- शिकारी के वेष से
गुणितं शोभित (शिव के)
शबरं शिवं शिकारी रूप शिव के
अन्वक् यान्तीं पीछे पीछे चलती हुई
लुठत्- लटकते हुए (स्पन्दमान)
गुञ्जाहार- गुंजा फलों (रत्तियों) के
स्तन भर- भारी वक्षःस्थलों के बीच में
नमन्- लटकते हुए
मध्यलतिकां हार के बीच वाले आभूषण युक्त
शबरीं शिकारिन रूप धारण किये हुए

मिथः केशाकेशि प्रधननिधनास्तर्कघटना-
बहुश्रद्धाभक्तिप्रणयविषयाश्चाप्तविधयः।
प्रसीद प्रत्यक्षीभव गिरिसुते! देहि शरणं
निरालम्बं चेतः परिलुठति पारिप्लवमिदम्॥४॥

पदच्छेदः

मिथः केशाकेशिप्रधननिधनाः तर्कघटनाः
बहुश्रद्धाभक्तिप्रणयविषयाः च आप्तविधयः।
प्रसीद प्रत्यक्षीभव गिरिसुते! देहि शरणं
निरालम्बं चेतः परिलुठति पारिप्लवम् इदम्॥४॥

तर्कघटना-	वादविवाद करने वाले (भिन्न भिन्न मतवादी)	चेतः	हमारा मन
		इदं	इस (संसाररूप)
मिथः -	एक दूसरे के	पारिप्लवं	उपद्रव में
केशाकेशि-	बालों को उखाड़ने के समान	परिलुठति	डूब रहा है॥

प्रधन- झगड़ों (कलह) के कारण
निधनाः नाश को प्राप्त होते हैं
आप्त- और परमार्थ को जानने वालों की
विधयः च विधियां (व्यवहार)
बहुश्रद्धाभक्ति- अत्यन्त विश्वास, प्रेम और
प्रणयविषयाः नम्रता रूप विषय से पूर्ण (होती हैं),
गिरिसुते! (इसलिए) हे पार्वती!
प्रसीद हम पर प्रसन्न हो जाओ,
प्रत्यक्षीभव (और) प्रकट रूप से अपना स्वरूप दिखाओ,
देहि शरणं हमें अपनी शरण में ले लो,
निरालम्बं आश्राय हीन

शुनां वा वह्नेर्वा खगपरिबदो वा यदशनं
कदा केन क्वेति क्वचिदपि न कश्चित्कलयति ।
अमुष्मिन्विश्वासं विजहिहि ममाह्नाय वपुषि
प्रपद्येथाश्चेत: सकलजननीमेव शरणम् ॥५॥

पदच्छेद: -

शुनां वा वह्ने: वा खगपरिबद: वा यत् अशनं
कदा केन क्व इति क्वचित् अपि न कश्चित् कलयति ।
अमुष्मिन् विश्वासं विजहि हि मम अह्नाय वपुषि
प्रपद्येथा: चेत: सकलजननीम् एव शरणम् ॥५॥

चेत: ! हे मन ! विजहिहि छोड़ दे
यत् जो (यह शरीर) सकलजननीम् एव सबों की
शुनां वा या तो कुत्तों का माता (देवी) को ही
वह्ने: वा या तो अग्नि का शरणं जो बचाने वाली है
(जलाये जाने से) प्रपद्येथा: शरण लो ॥
खगपरिबदो वा या तो पक्षियों
के समूह का
अशनं भोजन बनता है
कदा किस समय पर,
केन किस कारण से,
क्व किस स्थान पर,
इति इस बात को
कश्चित् कोई भी पुरुष
क्वचिदपि कहीं भी
न कलयति (विचार नहीं करता है)
नहीं जानता है
अमुष्मिन् इस (ऐसे शरीर)
मम मेरे
वपुषि शरीर पर
विश्वासं विश्वास (अभिमान)
अह्नाय तुरन्त ही

अनाद्यन्ता भेद प्रणयरसिकापि प्रणयिनी
शिवस्यासीर्यत्त्वं परिणयविधौ देवि ! गृहिणी।
सवित्री भूतानामपि यदुद्‌भूः शैलतनया
तदेतत्संसार प्रणयन महानाटक सुखम् ॥६॥

पदच्छेदः -

अनाद्यन्ता भेदप्रणय रसिका अपि प्रणयिनी
शिवस्य आसीः यत् त्वं परिणयविधौ देवि! गृहिणी
सवित्री भूतानाम् अपि यत् उद्‌भूः शैलतनया
तत् एतत् संसार प्रणयनमहानाटक सुखम् ॥ ६ ॥

देवि! हे देवी!
अनाद्यन्ता - आदि और अंत रहित,
भेद प्रणय - भेद के प्रेम का
रसिकापि स्वाद करने वाली होकर भी
प्रणयिनी प्रेम से भरी
यत् जो
त्वम् तू
परिणयविधौ विवाह की विधि में
शिवस्य शिव की
गृहिणी पत्नी
आसीः बन गई
यत् (और) जो
भूतानां जीवों की
सवित्री उत्पन्न करने वाली
अपि (होते हुए भी
शैलराज - हिमालय की
तनया पुत्री (बनकर)
उद्‌भूः उत्पन्न हुई
तदेतत् वही यह सब
संसार - संसार के
महा नाटक - बडे नाटक का
सुखम् सुख है

ब्रुवन्त्येके तत्त्वं भगवति! सदन्ये विदुरस-
त्परे मातः! प्राहुस्तव सदसदन्ये सुकवयः।
परे नैतत्सर्वं समभिदधते देवि! सुधिय-
स्तदेतत्त्वन्माया विलसितमशेषं ननु शिवे!॥७॥

पदच्छेदः

ब्रुवन्ति एके तत्त्वं भगवति सत् अन्ये विदुः असत्
परे मातः प्राहुः तव सत् असत् अन्ये सुकवयः।
परे न एतत् सर्वं समभिदधते देवि सुधियः
तत् एतत् त्वत् माया विलसितं अशेषं ननु शिवे॥ ७॥

भगवति!	हे ऐश्वर्य शालिनी देवी!	समभिदधते	कहते हैं,
		देवि! शिवे!	हे देवी, हे शिव की शक्ति
एके	कुछ लोग		
तव	तुम्हारे	तत्	तो
तत्त्वं	स्वरूप को	एतत् अशेषं	यह सब कुछ
सत्	सत् रूप (भाव)	ननु	निश्चय ही
ब्रुवन्ति	कहते हैं,	त्वत्-	तुम्हारी
अन्ये	इनसे भिन्न कुछ और लोग	माया-	माया शक्ति का
		विलसितम्	विकास है॥

असत् असत् रूप (अभाव)
विदुः जानते हैं,
अन्ये परे इन से भी परे (कुछ)
सुकवयः सर्वज्ञ जन
सदसत् (तुम्हारे स्वरूप को)
सत् तथा असत्
दोनों ही (भावाभाव)
प्राहुः कहते हैं,
परे इन से भी परे (कुछ योगी)
सुधियः बुद्धिमान
नैतत्सर्वं इन सत् और असत्
दोनों में से कुछ भी नहीं

तडित्कोटिज्योतिर्द्युतिदलितषड्ग्रन्थिगहनं
प्रविष्टं स्वाधारं पुनरपि सुधावृष्टिवपुषा।
किमप्यष्टात्रिंशत्किरणसकलीभूतमनिशं
भजे धाम श्यामं कुचभरनतं बर्बरकचम्॥८॥

पदच्छेदः -

तडित् कोटि ज्योतिः द्युतिदलितषट्ग्रन्थिगहनं
प्रविष्टं स्वाधारं पुनः अपि सुधावृष्टिवपुषा।
किम् अपि अष्टात्रिंशत् किरण सकलीभूतम् अनिशं
भजे धाम श्यामं कुचभरनतं बर्बरकचम्॥८॥

तडित्कोटि- करोडों बिजलियों के
ज्योति- प्रकाश की
द्युति- दीप्तियों से
दलित- काटी हुई
षड्ग्रंथिगहनं छः ग्रंथि रूप जंगल (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, अहङ्कार) वाले,
पुनःअपि फिर भी
सुधावृष्टि- चित अमृतवर्षा रूप
वपुषा स्वरूप से
स्वाधारं अपने आधार में
प्रविष्टं प्रवेश किये हुए
किमपि किसी अलौकिक,
(1) अष्टात्रिंशत- अड़तीस
किरण- किरणों से
सकलीभूतं परिपूर्ण बने हुए
श्यामं श्याम वर्ण
धाम स्वरूप (देवी) को
बर्बरकचम् (काश्मीरी) बबर जैसे चमकीले स्वरूप को

अनिशं बार बार (निरन्तर)
भजे (मैं) नमस्कार करता हूं

(1) Foot note: ३८ किरण, सूर्य, ~~के~~ १२ कला, चन्द्रमा १६ कला, अग्नि १० कला.

चतुष्पत्रान्तः षड्दलभगपुरान्तस्त्रिवलय-
स्फुरद्विद्युद्वह्निद्युमणिनियुताभद्युतियुते।
षडस्त्रं भित्त्वादौ दशदलमथ द्वादशदलं
कलास्त्रं च द्व्यस्त्रं गतवति! नमस्ते गिरिसुते ॥९॥

पदच्छेदः-

चतुष्पत्रान्तः षड्दलभगपुरान्तः त्रिवलय-
स्फुरत विद्युत वह्नि द्युमणि नियुताभ द्युतियुते।
षट् अस्त्रं भित्वा आदौ दशदलं अथ द्वादशदलं
कलाअस्त्रं च द्विअस्त्रं गतवति! नमस्ते गिरिसुते! ॥ ९॥

चतुष्पत्रान्तः चारपत्ते वाले कमल (मूलाधार) केबीच में
षड्दल- छः पत्ते रूप
भगपुरान्तः दो त्रिकोणों के भीतर (इच्छा-ज्ञान-क्रिया और इन के वेद्य)
त्रिवलय- तीन बार लपेटी हुई
स्फुरत्- विकसित होती हुई
विद्युत्- बिजली
वह्नि - अग्नि (तथा)
द्युमणि- सूर्य के समान
नियुताभ- अनन्त
द्युतियुते तेजवाली!
आदौ पहले
षडस्त्रं षड्दलकमल को (स्वाधिष्ठान)
भित्वा फाड कर
अथ इस के बाद
दशदलं दस पत्ते वाले कमल को में (मणिपूर- नाभि)
द्वादशदलं फिर बारह पत्ते वाले कमल को (अनाहत- हृदय)
कलास्त्रं फिर १६ पत्ते वाले कमल को (विशुद्ध-कण्ठ)
द्व्यस्त्रं फिर २ पत्ते वाले कमल में (आज्ञा-भ्रूमध्य)
गतवति प्रवेश करती हुई (सहस्रार और ब्रह्मरन्ध्र में)
गिरिसुते! हे हिमालय की पुत्री पार्वती!
नमस्ते तुम्हे नमस्कार हो।

कुलं केचित्प्राहुर्वपुरकुलमन्ये तव बुधाः
परे तत्सम्भेदं समभिदधते कौलमपरे।
चतुर्णामप्येषामुपरि किमपि प्राहुरपरे
महामाये! तत्त्वं तव कथममी निश्चिनुमहे॥२०॥

पदच्छेदः -

कुलं केचित् प्राहुः वपुः अकुलं अन्ये तव बुधाः
परे तत्सम्भेदं समभिदधते कौलं अपरे।
चतुर्णां अपि एषाम् उपरि किं अपि प्राहुः अपरे
महामाये! तत्त्वं तव कथं अमी निश्चिनुमहे॥२०॥

महामाये!	हे महामाया!
केचित्	कुछ लोग
तव	तुम्हारे
वपुः	स्वरूप को
कुलं	कुलरूप (३६ तत्त्वस्वरूप, विश्वमय)
प्राहुः	कहते हैं।
अन्ये	इनसे भिन्न कुछ और लोग
बुधाः	ज्ञानी लोग
अकुलं	कुलातीत (विश्वोत्तीर्ण) (मानते हैं)
परे	इनसे भी भिन्न कुछ
तत्सम्भेदं	(इन दोनों) कुल तथा अकुल के मेलरूप, (विश्वमय तथा विश्वोत्तीर्ण)
समभिदधते	कहते हैं
अपरे	कुछ और लोग
कौलम्	कौलरूप (कहते हैं)
अपरे अमी	इन से भी उत्कृष्ट ज्ञानी
एषां	इन
चतुर्णां अपि	चारों से भी
उपरि	ऊंचा (उत्कृष्ट)

किमपि	कोई अलौकिक (अकथनीय) रूप
प्राहुः	मानते हैं
तव तत्त्वं	तुम्हारे स्वरूप को
कथं	कैसे
निश्चिनुमहे	हम निश्चयरूप से जानें! (नहीं जान सकते)।

षडध्वारण्यानीं प्रलयरविकोटि प्रतिरुचा
रुचा भस्मीकृत्य स्वपदकमल प्रह्व शिरसाम् ।
वितन्वानः शैवं किमपि वपुरिन्दीवररुचिः
कुचाभ्यामानम्रः शिव पुरुषकारो विजयते ॥ ११॥

पदच्छेदः —

~~षट्‌अध्वअरण्यानीम्~~

षट्‌अध्वअरण्यानीं प्रलयरविकोटि प्रतिरुचा
रुचा भस्मीकृत्य स्वपदकमलप्रह्वशिरसाम् ।
वितन्वानः शैवं किं अपि वपुः इन्दीवररुचिः
कुचाभ्याम् आनम्रः शिव पुरुषकारो विजयते ॥ ११॥

प्रलयरविकोटि -	प्रलयकाल के करोडों सूर्यों के समान
प्रतिरुचा	दीप्ति वाले
रुचा	तेज से
षट्‌अध्व -	छः अध्व (मार्ग) रूप
अरण्यानीं	वन को
भस्मीकृत्य	जला कर
स्वपदकमल -	अपने चरण कमलों पर
प्रह्वशिरसाम्	झुके हुए मस्तक वाले (भक्तों) को
किमपि	किसी अलौकि (अकथनीय)
इन्दीवररुचिः	कमल की शोभा वाले (सङ्कोच विकासमय)
शैवं वपुः	शिव के स्वरूप को
वितन्वानः	विस्तार से प्रकट करता हुआ
कुचाभ्याम्	ज्ञान क्रिया रूप स्तनों के बोझ से (दूध पिलाकर पालने वाली माता के)
आनम्रः	झुका हुआ
शिव -	शिव का
पुरुषकारः	उद्योग (शक्ति)
विजयते	जयशील है (सभी से उत्कृष्ट बढ़ चढ़ कर है।)

प्रकाशानन्दाभ्यामविदितचरीं मध्यपदवीं
प्रविश्यैतद्द्वन्द्वं रविशशिसमाख्यं कवलयन् ।
प्रविश्योर्ध्वे नादं लयदहन भस्मी कृतकुलः
प्रसादात्ते जन्तुः शिवमकुलमम्ब ! प्रविशति ॥१२॥

पदच्छेदः –

प्रकाश आनन्दाभ्यां अविदितचरीं मध्यपदवीं
प्रविश्य एतत् द्वन्द्वं रविशशिसमाख्यं कवलयन्।
प्रविश्य ऊर्ध्वं नादे लयदहन भस्मीकृत कुलः
प्रसादात् ते जन्तुः शिवं अकुलं अम्ब! प्रविशति॥१२॥

अम्ब!	हे माता!	शिवं	शिव में
अविदितचरीं	पहले अच्छी तरह न जानी हुई	प्रविशति	प्रवेश करता है॥ (शिव रूप ही बन जाता है॥)
मध्यपदवीं	संवित् में		
प्रकाशानन्दाभ्यां	चित् और आनन्द द्वारा		
प्रविश्य	प्रवेश करके,		
रविशशिसमाख्यं	सूर्य और चन्द्रमा नामवाले (प्राण, अपान)		
एतत् द्वन्द्वं	इस जोडे को		
कवलयन्	ग्रास करता हुआ		
ऊर्ध्वं नादे	ऊपरवाले नाद में		
प्रविश्य	प्रवेश करके		
लय –	लय (आत्मसात्कार) रूप		
दहन –	अग्नि से		
भस्मीकृत –	जलाये हुए (आत्मसात् किए हुए)		
कुलः	सभी तत्त्वों वाला (योगी)		
जन्तुः	जीव		
ते	तुम्हारे		
प्रसादात्	अनुग्रह से		
अकुलं	तत्त्वों से अतीत		

प्रियङ्गु श्यामाङ्गी मरुणतरवासः किसलयां
समुन्मीलन्मुक्ताफलबहुलनेपथ्य कुसुमाम्।
स्तनद्वन्द्वस्फार स्तबकनमितां कल्पलतिकां
सकृद्ध्यायन्तस्त्वां दधति शिवचिन्तामणिपदम्॥२३॥

पदच्छेदः -

प्रियङ्गु श्यामअङ्गीं अरुणतरवासः किसलयां
समुन्मीलत् मुक्ताफलबहुलनेपथ्य कुसुमाम्।
स्तनद्वन्द्व स्फार स्तवकनमितां कल्पलतिकां
सकृत् ध्यायन्तः त्वां दधति शिवचिन्तामणिपदम्॥२३॥

[illegible]यङ्गु - [illegible]ङ्गु (पिङ्गु) जैसे
श्या[illegible]म् [illegible]श्याम वर्ण अङ्गों सहित,
अरुण[illegible]र- लाल रङ्ग के
[illegible]वासः - वस्त्ररूपी
किसलयां कोंपलों वाले
समुन्मीलन् - पूरी तरह खिले हुए
मुक्ताफल - मोती रूप फल की
बहुल - बहतात से
ने[illegible]थ्य - सजावटवाले
कुसुमां फूलों युक्त (और)
स्तनद्वन्द्व - ज्ञान क्रिया रूप दो स्तनों के
स्फार - फैलाव रूप
स्तवक - गुच्छे से
नमितां झुकी हुई
कल्पलतिका (भोग तथा मोक्ष सिद्ध कराने वाली) कल्पलतारूप
त्वां तुम्हारे स्वरूप को
सकृत् एक ही बार (निरन्तर)
ध्यायन्तः ध्यान करने वाले (भक्त)

शिवचिन्तामणिपदं शिवरूप चिंता-मणि रत्न के स्थान को
दधति धारण करते हैं॥
([illegible]प्त [illegible]रते हैं॥)

Foot note 1. एक लता का नाम जिस के सम्बन्ध में कहा जाता है कि जहां उसे किसी स्त्री ने स्पर्श किया कि, वह फूलने लगती है।